संचयिका

भाग 1

(केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अन्तर्गत द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए नवीं कक्षा की सहायक पुस्तक)

इन्द्रसेन शर्मा
स्नेहलता प्रसाद

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
फरवरी 1992
फाल्गुन 1913
P.D.70T – DPS

प्रकाशन सहयोग

सी० एन० राव : *अध्यक्ष,* प्रकाशन विभाग

प्रभाकर द्विवेदी	*मुख्य संपादक*	यू० प्रभाकर राव	*मुख्य उत्पादन अधिकारी*
दिनेश सक्सेना	*संपादक*	सुरेन्द्र कान्त शर्मा	*उत्पादन अधिकारी*
		चंद्र प्रकाश टंडन	*कला अधिकारी*
		शिव कुमार	*सहायक उत्पादन अधिकारी*
		समीउल्ला	*उत्पादन सहायक*

आवरण : दिलीप कुमार शेन्डे
अलंकरण : केशव वाघ
मूल्य : रु. 7.00

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा एडवांस टाइपसैटर्स, VIII/730, आर. के. पुरम्, नई दिल्ली 110 022 द्वारा लेज़र टाइपसेट होकर दि डेली तेज (प्रा०) लिमिटेड, बहादुरशाह ज़फर मार्ग, नई दिल्ली 110 002 द्वारा मुद्रित।

आमुख

भारतीय विद्यालयी शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में लगभग सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में त्रिभाषा सूत्र के प्रभावी कार्यान्वयन पर बल दिया जा रहा है। इस दृष्टि से अखिल भारतीय संदर्भ में हिंदी के पठन-पाठन की तीन स्थितिपरक भूमिकाएँ हो जाती हैं –

(1) प्रथम भाषा के रूप में पहली कक्षा से दसवीं कक्षा तक,

(2) द्वितीय भाषा के रूप में छठी कक्षा से दसवीं कक्षा तक, तथा

(3) तृतीय भाषा के रूप में सातवीं कक्षा से दसवीं कक्षा तक।

द्वितीय भाषा के रूप में किसी भाषा के पठन- पाठन की अपनी विशिष्ट अपेक्षाएँ होती हैं, जिसके कारण द्वितीय भाषा की पाठ्यचर्या प्रथम भाषा की पाठ्यचर्या से भिन्न हो जाती है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी के पाठ्यक्रम निर्धारण एवं पाठ्यसामग्री निर्माण के मार्ग-दर्शक सिद्धांत निश्चित करने के लिए अखिल भारतीय स्तर पर जनवरी 1990 में हैदराबाद में एक विचारगोष्ठी का आयोजन किया था। इस गोष्ठी में सुझाए गए सिद्धांतों को ध्यान में रखकर परिषद् ने द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी के पठन- पाठन के लिए पुस्तकों के निर्माण का कार्य आरम्भ किया। इसी कड़ी में प्रस्तुत पुस्तक में उपर्युक्त योजना के अंतर्गत नवीं कक्षा में द्वितीय भाषा हिंदी के शिक्षार्थियों के लिए पूरक पठन-सामग्री प्रस्तुत की गई है।

प्रणीत पुस्तक में पठन-सामग्री के चयन का आधार मुख्यतः यह रहा है कि :

(1) ऐसी पठन-सामग्री का समावेश किया जाए जो शिक्षार्थी में राष्ट्रीय लक्ष्यों तथा केन्द्रिक पाठ्यचर्या में प्रतिपादित जीवन मूल्यों –

लोकतंत्र, धर्म निरपेक्षता, समाजवाद, सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय एकता के प्रति चेतना एवं आस्था विकसित कर सके।

(2) पठन-सामग्री में भारतीय परिस्थितियाँ तथा राष्ट्र की सामासिक संस्कृति परिलक्षित हो।

(3) पूरक पठन की पुस्तक मूलतः स्व-अध्ययन एवं स्वाध्याय के द्वारा पठन-रुचि के विस्तार की वस्तु होती है। अतः प्रस्तुत पुस्तक में ऐसी पठन-सामग्री के चयन का प्रयास किया गया है जो अपनी रोचकता, बोधगम्यता एवं विविधता के कारण शिक्षार्थियों को स्व-अध्ययन के लिए तो प्रेरित करे ही, साथ ही उन्हें ऐसी अन्य सामग्री पढ़ने के लिए भी उत्प्रेरित करे। इस प्रकार की अतिरिक्त सामग्री के अध्ययन से छात्रों में लक्ष्य भाषा का अधिकाधिक विकास संभव हो सकेगा।

इस कार्य के लिए मार्ग-दर्शक सिद्धांतों के निर्धारण के लिए हैदराबाद में आयोजित विचारगोष्ठी में भाग लेने वाले प्रमुख शिक्षाविदों, भाषाशास्त्रियों, विषय-विशेषज्ञों तथा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की अकादमिक शाखा के निदेशक डॉ. कृष्णदेव शर्मा एवं बोर्ड की हिंदी पाठ्यक्रम समिति के अध्यक्ष प्रो. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। निर्धारित मार्ग- दर्शक सिद्धांतों के आधार पर पुस्तक निर्माण कार्य में सहयोग देने के लिए विषय-विशेषज्ञों, अधिकारी विद्वानों तथा अनुभवी शिक्षकों के प्रति भी मैं अपना आभार व्यक्त करता हूँ।

पाठ्यसामग्री. के संयोजन और संपादन के लिए परिषद् के सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग में मेरे सहयोगी डा. इन्द्रसेन शर्मा तथा डा. (कु.) स्नेहलता प्रसाद के प्रति मैं अपना धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

आशा है कि यह पुस्तक विद्यार्थियों में हिंदी भाषा एवं साहित्य के प्रति

स्वाध्याय-रुचि विकसित करने में सहायक सिद्ध हो सकेगी। पुस्तक में संशोधन एवं परिष्करण के लिए सुधी अध्यापकों एवं शिक्षाशास्त्रियों के सुझावों का स्वागत है।

डा. के. गोपालन
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली

पुस्तक निर्माण में सहयोग के लिए आभार

प्रो. नामवर सिंह, प्रो. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, प्रो. माणिक गोविन्द चतुर्वेदी, प्रो. वी. रा. जगन्नाथन, प्रो. सूरजभान सिंह, प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी, डॉ. आनन्द प्रकाश, डॉ. मानसिंह वर्मा, डॉ. सुरेश पंत, डॉ. पंजाबीलाल शर्मा, डॉ. कमला कौशिक, डॉ. वी. एन. सिंह, डॉ. अमरसिंह कुशवाहा, डॉ. जयपाल सिंह तरंग, डॉ. राजेश कुमार, डॉ. अमरजीत कौर पसरीचा ।

भूमिका

भाषा की पाठ्यचर्या में छात्रों की पठन योग्यता के विकास के लिए दो प्रकार की पुस्तकें निर्धारित की जाती हैं – एक, वे पुस्तकें जो गहन अध्ययन केन्द्रित होती हैं और दूसरी वे, जिनमें विस्तृत एवं व्यापक अध्ययन हेतु छात्रों को उपयुक्त सरल सामग्री उपलब्ध कराई जाती हैं। पहले प्रकार की पुस्तकों को पाठ्यपुस्तक तथा दूसरे प्रकार की पुस्तकों को पूरक पुस्तक की संज्ञा दी जाती है। पाठ्यपुस्तक द्वारा शिक्षार्थी में बोधन, अभिव्यक्ति तथा चिन्तन संबंधी भाषिक कौशलों के विकास का प्रयास किया जाता है, जबकि पूरक पुस्तक से शिक्षार्थी में पाठ्यपुस्तक से प्राप्त ज्ञान, भाषिक कौशलों तथा अनुभवों के सम्पोषण संवर्धन एवं विस्तृण की अपेक्षा की जाती है। वे शिक्षार्थी में समझ के साथ द्रुत गति से पठन तथा स्वाध्याय रुचि के विकास के लिए आवश्यक अवसर प्रदान करती हैं, ताकि वह अपनी भाषा-व्यवहार योग्यता और अपने अनुभव क्षितिज का उत्तरोत्तर विकास कर सके।

द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी की पूरक पुस्तकें उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त कुछ अन्य विशेषताओं की भी अपेक्षा रखती हैं। समग्र राष्ट्र की सामासिक संस्कृति की संवाहिका के रूप में, विविधताओं से भरे इस देश को, भावनात्मक रूप से एक सूत्र में पिरोने का दायित्व हिन्दी का ही है। साथ ही यह बहुभाषिकता के परिप्रेक्ष्य में, देश के विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच व्यावहारिक सम्पर्क स्थापित करने का कार्य भी करती है। इस दृष्टि से द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी के पठन-पाठन के लिए निर्धारित पूरक पुस्तकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे एक ओर तो राष्ट्र की सामासिक संस्कृति को परिलक्षित करें और दूसरी ओर शिक्षार्थियों में अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी के व्यावहारिक प्रयोग की कुशलताओं को विकसित करने में

सहायक सिद्ध हों। इतना ही नहीं, उनमें ऐसी सामग्री का भी समावेश हो जो हिन्दीतर भाषियों को हिन्दी क्षेत्र की संस्कृति विशेष से जोड़ सके, ताकि शिक्षार्थी का हिन्दी भाषा के साथ उचित रागात्मक संबंध स्थापित हो सके। वास्तव में किसी भी द्वितीय भाषा को सही अर्थ में सीखने के लिए यह अनिवार्य है कि शिक्षार्थी के लिए भाषा-अधिगम की प्रक्रिया मात्र एक बौद्धिक अनुभव न होकर एक जीवंत भावात्मक अनुभव भी बन सके।

मोटे तौर से पाठ्यपुस्तक एवं पूरक पुस्तक की अपेक्षाओं में विशेष अंतर प्रतीत नहीं होता है, किन्तु पाठ्यपुस्तक के मुख्यतः परीक्षा केन्द्रित होने के कारण उसके प्रति शिक्षार्थी की मनःस्थिति भिन्न हो जाती है। इसके विपरीत पूरक पुस्तक में स्वाध्याय पर बल होने के कारण शिक्षार्थी में लक्ष्य भाषा के प्रति सहज अनुराग उत्पन्न करने की संभावना अधिक रहती है। इस दृष्टि से पूरक पुस्तक में ऐसी सामग्री संजोने का प्रयास किया जाता है, जिससे छात्रों में लक्ष्य भाषा में उपलब्ध इसी प्रकार की रुचिकर सामग्री पढ़ने की उत्सुकता जाग्रत हो सके। लक्ष्य भाषा की अधिकाधिक सामग्री का पठन छात्रों में उस भाषा के ज्ञान को उत्तरोत्तर विकसित करेगा।

अतः प्रस्तुत पुस्तक के प्रणयन में यह ध्यान रखने का प्रयत्न किया गया है कि इसमें उपर्युक्त अपेक्षाओं का यथासंभव निर्वाह हो सके। विषय सामग्री के चयन में मोटे तौर पर निम्नलिखित बातों पर विशेष बल दिया गया है —

(1) पूरक पुस्तक मूलतः स्वाध्याय की वस्तु होती है। अतएव उसका सरल एवं रोचक होना अत्यंत आवश्यक होता है। इसके अभाव में विद्यार्थी के लिए पुस्तक का पढ़ पाना भार-स्वरूप हो सकता है। यह जानी मानी बात है कि इस दृष्टि से साहित्य की अन्य विधाओं में कहानी अपेक्षाकृत अधिक अनुकूल पड़ती है। प्रस्तुत पुस्तक में अधिकांशतः कहानियों का ही चयन किया गया है। कहानियों में लघु एवं बोध-कथाओं को भी स्थान दिया गया है। "महापुरुषों के

बचपन" और "बहादुर बीरसा", जीवनी के निकट होते हुए भी कथात्मक रोचकता लिए हुए हैं। कहानियों में रोमांच और कौतूहल सर्वत्र बना रहता है। इस दृष्टि से प्रस्तुत पुस्तक की "बकरी दो गाँव खा गई", "एंड्रोक्लीज़ और शेर", "लालू" तथा "भ्रम का भूत" कहानियाँ विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं।

(2) ध्यान रखा गया है कि पठन-सामग्री ऐसी हो, जो राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में वाँछित जीवन-मूल्यों के विकास में सहायक सिद्ध हो सके। ये मूल्य कहानी में सहज रूप से अनुस्यूत हों, थोपे गए से प्रतीत न हों। इसके अतिरिक्त यह प्रयास भी किया गया है कि चुनी गई पठन सामग्री किशोर प्रयोक्ताओं की सामाजिक, सांवेगिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम हो। इस दृष्टि से देश भक्ति एवं साहसिकता के लिए "सिपाही की विदाई" और "बहादुर बीरसा" पाठों को देखा जा सकता है। इसी प्रकार कर्तव्य-निष्ठा, पारस्परिक प्रेम-भावना और स्वातंत्र्य के लिए "मित्र का ऋण", "बहू-लक्ष्मी", "मंत्र-तंत्र", "बहादुर बीरसा", "एंड्रोक्लीज और शेर" आदि कहानियाँ पठनीय हैं। "भ्रम का भूत" में मनोवैज्ञानिक ढंग से यदि भय के भूत को भगाने का प्रयत्न हुआ है तो "लालू" में बलि-प्रथा के पाखंड पर सीधी चोट की गई है। जनतांत्रिकता तथा सांप्रदायिक क्षेत्रीय सद्भाव की दृष्टि से "बहादुर बीरसा", "माँ" तथा "सिपाही की विदाई" अवलोकनीय है। "माँ" एक ऐसी सशक्त कहानी है, जिसमें निम्न मध्यवर्गीय जीवन की आर्थिक तंगी, और परिस्थितिगत विवशताओं से जूझते हुए युवक को माँ की बेजोड़ ममता के सम्मुख पानी-पानी होते पाया गया है। "बोध-कथाओं" और "महापुरुषों के बचपन" में भी अनेक नैतिक, सामाजिक और व्यावहारिक जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति हुई है।

3. विषय सामग्री के चयन में यह भी ध्यान रखा गया है कि इसके द्वारा विद्यार्थी के पूर्वार्जित ज्ञान, भाषा प्रयोग के संस्कारों तथा जीवन के क्षितिज का बहुआयामी विकास हो सके। इस दृष्टि से सभी पाठ जीवन के विविध अनुभवों को द्योतित करते हैं। आदमी-आदमी के संबंधों को पुष्ट करने की दृष्टि से "बहू-लक्ष्मी", "माँ" और "मित्र का ऋण" कहानियाँ अवलोकनीय हैं।

4. ध्यान रखा गया है कि पठन सामग्री ऐसी हो, जिससे एक ओर देश की सामासिक संस्कृति परिलक्षित हो सके तो दूसरी ओर शिक्षार्थी को हिन्दी क्षेत्र की संस्कृति विशेष से परिचित करा-या जा सकें, जिससे उसमें भाषायी संस्कृति के प्रति अभीष्ट अभिवृत्ति का निर्माण हो सके। इस दृष्टि से "माँ", "बहादुर बीरसा" तथा "सिपाही की विदाई" पाठ देखे जा सकते हैं।

5. वह शिक्षार्थी में अखिल भारतीय स्तर पर संपर्क-भाषा के रूप में हिन्दी के भाषिक व्यवहार की योग्यता की अभिवृद्धि कर सके।

6. पाठों के बाद में बोध प्रश्न भी दिए गए हैं। प्रश्न निर्माण में ध्यान रखा गया है कि प्रश्न न केवल विद्यार्थी की पाठ की समझ का मूल्यांकन कर सकने में समर्थ हों बल्कि प्रश्नों के उत्तर जानने के बाद पाठ की अपेक्षाओं को उद्‌घाटित कर सकने में भी सहायक हों।

7. यह भी अपेक्षित समझा गया है कि प्रश्न यथासंभव वस्तुनिष्ठ एवं लघुत्तरात्मक प्रकार के हों जिससे शिक्षार्थियों को उत्तर देने में कठिनाई न हो। यद्यपि भाषा एवं बोध के स्तर पर सरल पाठों का ही चयन किया गया है तथापि पुस्तक के परिशिष्ट में शब्दार्थ और टिप्पणी देकर उसे और बोधगम्य बनाने का प्रयत्न किया गया है।

आशा की जाती है कि विद्यार्थी प्रस्तुत पुस्तक को रुचि लेकर पढ़ेंगे। यह गद्य अध्ययन की पुस्तक नहीं है, इसलिए पाठों में आए प्रत्येक शब्द का अर्थ जानना आवश्यक नहीं है। फिर भी एक सीमा तक पुस्तक के बाद में दिए गए शब्दार्थ और टिप्पणियों की सहायता से वे अपनी इस कठिनाई का निवारण कर सकते हैं। आवश्यकतानुसार अध्यापक की भी सहायता ली जा सकती है। शिक्षार्थी पठन के अभ्यास पर अवश्य ध्यान दें। मौन-पठन में द्रुतता लाने का प्रयास करें। जो बात अथवा पंक्तियाँ अच्छी लगें, उन पर अपने साथियों के साथ चर्चा करें। पूरक पुस्तक के रूप में न तो यह पुस्तक अंतिम है, न पर्याप्त। यदि यह अतिरिक्त पुस्तक पठन के लिए प्रेरक सिद्ध हो सके तो हमारा यह प्रयास सार्थक सिद्ध होगा।

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ:

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

विषय-सूची

वर्ग I : कथा-चित्र

वर्ग II : बोध कथाएँ

वर्ग III : महापुरुषों के बचपन

बकरी दो गाँव खा गई

"हाय, बकरी दो गाँव खा गई ।" एक आदमी आगरा की सड़कों पर रोता-चिल्लाता घूम रहा था । लोग आश्चर्य में थे कि भला बकरी गाँव कैसे खा सकती है ? आखिर यह खबर बादशाह अकबर तक पहुँची । बादशाह ने उसे दरबार में बुलाया । उस आदमी को उन्होंने देखते ही पहचान लिया।

बादशाह को याद आया कि वे कुछ समय पहले आगरा के पास किसी गाँव में गए थे । वे बहुत थक गए थे । यह आदमी उन्हें वहाँ गन्ने के एक

खेत में मिला था। उन्होंने उससे कहा था, "भाई ! थोड़ा गन्ने का रस पिला सकते हो।"

"हाँ . . . हाँ . . . आप बैठिए। मैं अभी लाया।"

अकबर एक पेड़ की छाया में बैठ गए। वह किसान खेत में गया। एक गन्ना तोड़ा और एक बड़े लोटे में रस निकालकर ले आया।

अकबर ने गन्ने का रस पिया तो बहुत खुश हुए।

"अरे वाह ! ऐसा रस तो हमने पहले कभी नहीं पिया।"

"जी, और यह सिर्फ़ एक ही गन्ने का रस है।"

"क्या ?" एक गन्ने में इतना सारा रस ! अकबर को आश्चर्य हुआ।

"मैं बिल्कुल सच कह रहा हूँ, हुज़ूर !"

"कमाल की बात है।"

"ये हमारे बादशाह की नीयत का कमाल है जनाब। अगर उनकी नीयत ठीक न हो, तो गन्नों में रस ही न निकले।"

"अच्छा, कितना लगान देते हो ?

"जी, लगान तो सिर्फ पच्चीस पैसे ही देने पड़ते हैं।"

"सिर्फ पच्चीस पैसे !" बादशाह ने हैरान होकर पूछा। फिर वे सोचने लगे कि ऐसे रसवाले गन्ने के खेत पर तो काफ़ी रुपए लगान लगाना चाहिए। ठीक है, आगरा पहुँचते ही इसका लगान बढ़ा दूँगा।

कुछ देर इधर-उधर की बातें करने के बाद अकबर ने कहा– "अच्छा भाई, चलने से पहले ज़रा एक लोटा रस और पिला दो।"

किसान लोटा लेकर चला गया। उसने एक गन्ना तोड़ा लेकिन इस बार लोटा न भरा, फिर एक के बाद एक तीन-चार गन्ने तोड़े और उनका रस निकाला, फिर भी लोटा न भरा।

अकबर उसका इंतज़ार कर रहे थे। सोच रहे थे – इस बार तो इसने देर कर दी। तभी किसान मुँह लटकाये हुए आया और लोटा बादशाह की तरफ बढ़ा दिया। लोटे में रस थोड़ा-सा ही था।

"अरे ! क्या बात है ?" इतना कम रस लेकर क्यों आए ?

"कुछ नहीं हजूर । लगता है अकबर बादशाह की नीयत बिगड़ गई है। उसी का असर है ।"

और अकबर को लगा जैसे किसी ने उसे आसमान से ज़मीन पर पटक दिया हो । आदमी की नीयत में फ़र्क आने से क्या पेड़-पौधों पर भी असर पड़ता है । उसे लगा जैसे वह मामूली किसान एक बादशाह को इंसानियत का पाठ पढ़ा रहा है । जहाँ नीयत अच्छी है वहाँ बरकत होती है। भंडार भरा रहता है । लालच और छोटापन आदमी को कभी सुखी नहीं बनाते ।

अकबर ने कहा – "भाई ! तुम जानते हो, मैं कौन हूँ ?" किसान संशयपूर्वक बादशाह की ओर देखने लगा । मैं बादशाह अकबर हूँ ।

किसान ने घबरा कर पूछा – मैंने कोई ग़लत बात तो नहीं कह दी ?"

"नहीं ! तुमने मुझे वह बात सिखायी है जो बड़े- बड़े विद्वान गुरु भी अपने शासकों को नहीं सिखा पाते । आज से तुम्हारे खेत का लगान बिल्कुल माफ़ किया । जाओ, इस बार लोटा भर कर रस ले आओ ।

किसान फिर से खेत में गया । इस बार फिर से एक ही गन्ने के रस से लोटा भर गया । वह खुश होकर दौड़ा आया । उसने लोटा आगे बढ़ा दिया। अकबर ने रस पिया । फिर पीपल का एक पत्ता उठाकर बोले – "हम इस पर तुम्हें दो गाँव देने का हुक्म लिख रहे हैं । कल आगरा आना और पक्के कागज़ लिखवा लेना । तुम्हारे खाने-पीने का इंतजाम इन गाँवों की आमदनी से हो जाएगा ।"

किसान ने पीपल का पत्ता रख लिया । अकबर चले गए । किसान काम में लग गया । कुछ देर बाद वह पत्ते की बात ही भूल गया । किसान की बकरी आई और उस पत्ते को खा गई ।

जब किसान को उस पत्ते की याद आई तो उसने देखा कि पत्ता तो अपनी जगह पर नहीं है । वह रोने-चिल्लाने लगा । अब भला उसे बादशाह कैसे पहचानेंगे । उस पत्ते को देखे बिना गाँव कैसे देंगे । वह ज़ोर-ज़ोर से रोता-चिल्लाता आगरा पहुँचा – "हाय ! बकरी दो गाँव खा गई ।"

बकरी द्वारा दो गाँव खाने का किस्सा सुनकर अकबर बादशाह किसान के भोलेपन पर बहुत हँसे। उन्होंने फिर उसे दो गाँव देने का हुक्म लिख कर दिया और जाते-जाते सावधान किया — "इस बार इन गाँवों को बकरी से बचाना।"

सारा दरबार कहकहों से गूँज उठा।

बोध प्रश्न

उत्तर दीजिए —

1. किसान से गन्ने का रस माँगने वाला कौन था ?
2. पहली बार कितने गन्नों के रस से लोटा भरा ?
3. दूसरी बार लोटा क्यों नहीं भरा ?
4. पहली बार गन्ने का रस पीने के बाद बादशाह के मन में क्या विचार उठा ?
5. बादशाह ने किसान की बात से क्या नसीहत ली ?
6. चलने से पहले बादशाह ने एक लोटा रस और पीने की माँग क्यों की ?
7. बकरी के दो गाँव खाने के लेखक का क्या आशय है ?

II दिए गए शब्दों के आधार पर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

किसान फिर से खेत में गया। इस बार ------- से एक ही गन्ने के रस से लोटा -------- गया। वह खुश होकर दौड़ा आया। उसने लोटा ------- बढ़ा दिया। अकबर ने रस पिया। फिर पीपल

------ एक पत्ता उठाकर बोले – "हम इस पर तुम्हें -------- गाँव देने का हुक्म दे रहे हैं। कल ------- आना और पक्के कागज लिखवा लेना। तुम्हारे खाने- पीने का ------- इन गाँवों की आमदनी से हो जाएगा।"

(आगरा, आगे, इंतज़ाम, का, फिर, भर, दो)

एंड्रोक्लीज़ और शेर

सैंकड़ों बरस पहले की बात है। उस समय रोम में गुलामी की प्रथा थी। गुलामों के पास किसी तरह का कोई अधिकार नहीं था। मालिक उनका मालिक ही था। वह उन्हें भेड़-बकरियों की तरह बेच सकता था। उनके साथ प्रायः बहुत बुरा व्यवहार किया जाता था। उन्हीं दिनों एंड्रोक्लीज़ नामक रोम के एक गुलाम को उसका मालिक अफ्रीका ले गया। मालिक बहुत निर्दयी और पत्थर दिल आदमी था। वह दिन निकलने से पहले बहुत रात बीतने तक एंड्रोक्लीज़ से काम लेता, मगर पहनने को उसे न तो पूरे कपड़े देता और न पेटभर खाना। अपने मालिक के इस बरताव से एंड्रोक्लीज़ तंग आ गया और सोचने लगा कि, क्यों न कहीं भाग जाऊँ और मालिक के पंजे से छुटकारा पाऊँ। वह यह भी जानता था कि इस तरह भागने के बाद यदि पकड़ा गया तो उसे मौत की सजा मिलेगी। मगर वह मालिक के व्यवहार से इतना तंग आ गया था कि उसने सोचा कि इस प्रकार के जीवन से मरना अच्छा है।

एक दिन रात को वह घर से निकल भागा, और समुद्र के किनारे की तरफ़ चल दिया। उसका विचार था कि वहाँ से वह किसी न किसी तरह रोम पहुँच जाएगा। सारी रात वह बहुत तेज़ी से चलता रहा। मगर रात के अँधेरे में वह रास्ता भूल गया, और समुद्र के किनारे पहुँचने के बजाए एक घने जंगल में जा पहुँचा। चलते-चलते वह थककर चूर हो गया था। भूखा-प्यासा तो वह था ही। भटकते-भटकते उसे एक पहाड़ी की गुफा

दिखाई दी। वह गुफा में जाकर लेट गया, और कुछ ही देर में उसकी आँख लग गई।

एक दिल दहला देने वाली दहाड़ सुनकर वह जागा और हड़बड़ाकर उठा। देखता क्या है कि गुफा के मुँह पर एक शेर रास्ता रोके खड़ा है। उसने समझ लिया कि अब मौत आ गई। उसने अपने अब तक के जीवन पर एक निगाह डाली और सोचा— गुलामी से मौत क्या बुरी है।

शेर खड़ा-खड़ा अपना एक पंजा बार-बार चाट रहा था। एंड्रोक्लीज़ ने सोचा— हो-न-हो, शेर के पंजे में कोई तकलीफ है। वह हिम्मत करके आगे बढ़ा और उसने शेर का पंजा देखा। पंजे से खून बह रहा था और उसमें एक बड़ा-सा काँटा चुभा हुआ था। एंड्रोक्लीज़ ने काँटा निकाला, और घाव को थोड़ी देर अपने हाथ से दबाए रखा। इससे खून बहना बंद हो गया।

शेर लंगड़ाता-लंगड़ाता वहाँ से चला गया और कुछ ही देर में उसने एंड्रोक्लीज के पास एक मरा हुआ खरगोश लाकर डाल दिया। एंड्रोक्लीज ने खरगोश को भूना। शेर खड़ा-खड़ा देखता रहा। जब एंड्रोक्लीज़ ने भुना हुआ खरगोश खा लिया, तो शेर ने ध्यान से उसकी ओर देखा, और वह

आगे-आगे चलने लगा। एंड्रोक्लीज़ उसके पीछे हो लिया। शेर उसे एक झरने पर ले गया। एंड्रोक्लीज़ ने वहाँ पानी पिया। फिर वे दोनों वापस उसी गुफा में आ गए। दोनों मित्र बन गए और वहाँ साथ-साथ रहने लगे।

एंड्रोक्लीज़ रोज जंगल में जाता और अपने लिए कोई शिकार मार लाता। जिस दिन उसे शिकार न मिलता, शेर उसके लिए कोई जानवर ले आता। इस तरह एंड्रोक्लीज़ को वहाँ कई महीने बीत गए। वह जंगल की इस जिंदगी से उकता गया। एक दिन वह वहाँ से चल दिया।

एंड्रोक्लीज़ के मालिक ने उसके भाग जाने की सूचना सरकार को दे दी थी। इधर-उधर भटकते गुलामों को सिपाही पकड़ लिया करते थे। कुछ दिनों बाद एंड्रोक्लीज़ उन सिपाहियों के हाथ में आ गया ? वे उसे रोम ले गए। वहाँ उसे कानून के अनुसार मृत्यु दंड दिया गया।

उन दिनों मृत्यु दंड बड़े अजीब ढंग से दिया जाता था। इस काम के लिए बड़ा भारी मैदान होता था। उस मैदान के चारों तरफ़ बादशाह, उसके बड़े-बड़े हाकिम, और शहर के लोग बैठ जाते थे। मृत्यु दंड पाए व्यक्ति को उस मैदान में छोड़ दिया जाता था और अपने बचाव के लिए उसे एक भाला दिया जाता था। चार- पाँच दिन का भूखा शेर एक पिंजरे

में बंद करके लाया जाता था और उसे भी मैदान में छोड़ दिया जाता था। उस आदमी को देखते ही भूखा शेर दहाड़ मारता हुआ उस पर टूट पड़ता। बेचारा आदमी भाले से शेर का सामना क्या करता। बात की बात में शेर उसे चीर-फाड़कर खा जाता।

एंड्रोक्लीज़ भी उस मैदान में लाया गया और एक भूखा शेर वहाँ छोड़ दिया गया। शेर बुरी तरह दहाड़ता हुआ आगे बढ़ा। वह एंड्रोक्लीज़ पर झपटने को ही था कि यकायक रुक गया और उसके सामने पालतू कुत्ते की तरह दुम हिलाने लगा। सब लोग दंग रह गए। पल भर के लिए सन्नाटा छा गया। एंड्रोक्लीज़ ने देखा, तो मालूम हुआ कि शेर उसका पुराना दोस्त था, जिसके साथ वह गुफ़ा में रहा था। उसने शेर की पीठ थपथपाई और उसे पुचकारा। शेर ने अपना सिर उसके पैरों में रख दिया।

यह देख बादशाह ने एंड्रोक्लीज़ को अपने पास बुलाया और पूछा– बात क्या है ? एंड्रोक्लीज़ ने शुरू से आखिर तक सारा किस्सा कह सुनाया। बादशाह सुनकर दंग रह गया। उसने एंड्रोक्लीज़ की जान बख्श
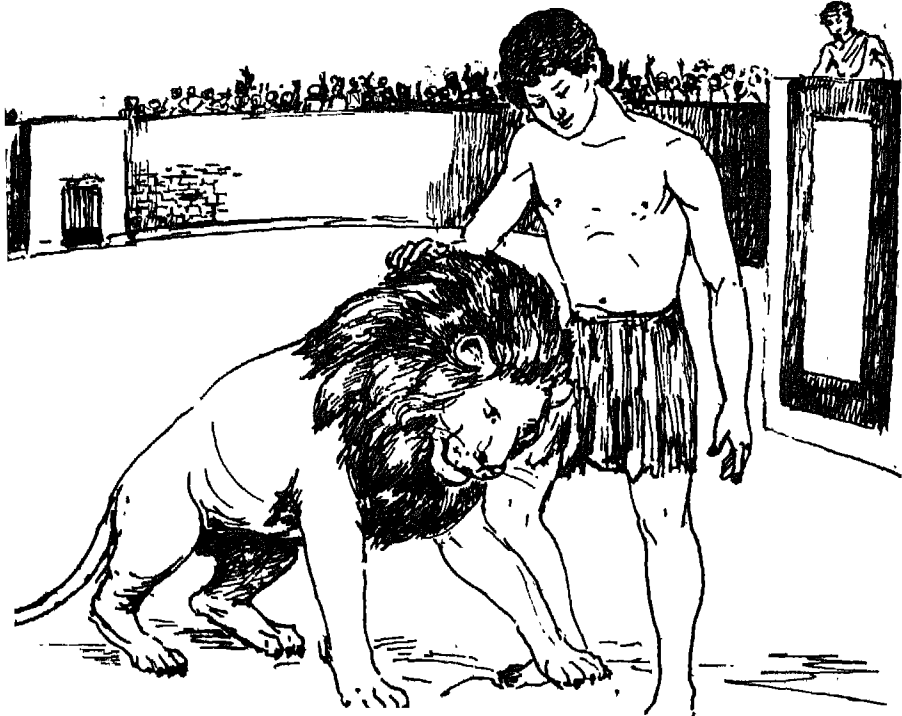
दी और उसे आज़ाद कर दिया। शेर भी उसी को सौंप दिया गया। दोनों दोस्त स्वतंत्र हो गए।

बोध प्रश्न

I. संक्षेप में उत्तर दीजिए –

1. एंड्रोक्लीज़ का मालिक एंड्रोक्लीज़ से कैसा व्यवहार करता था?
2. एंड्रोक्लीज़ ने शेर की क्या सहायता की ?
3. एंड्रोक्लीज़ को सिपाहियों ने क्यों पकड़ा ?
4. भूखा शेर एंड्रोक्लीज़ को खाने के बदले उसके सामने पूँछ क्यों हिलाने लगा ?

II. प्रत्येक वाक्य के सामने कोष्ठ दिए गए शब्दों से उपयुक्त शब्द चुनकर वाक्य पूरा कीजिए

1. मालिक के व्यवहार से एंड्रोक्लीज़ ------- हो गया।
   (तंग/प्रसन्न/उदासीन)
2. इधर-उधर भटकते ------- को सिपाही पकड़ लेते थे।
   (गुलाम/कर्मचारी/चोर)
3. शेर -------- वहाँ से चला गया।
   (लंगड़ाता-लंगड़ाता/दौड़ता-दौड़ता/कूदता-कूदता)
4. एंड्रोक्लीज़ ने सोचा हो-न-हो शेर के -------- में कोई तकलीफ़ है।
   (सिर/ पेट/ पंजे)

बहू लक्ष्मी

एक लकड़हारा था। उसके चार लड़के थे। वे सभी बड़े आलसी और निकम्मे थे। उन्हें गाँव के ज़मींदार के यहाँ रोज एक-एक गट्ठर लकड़ियाँ देनी पड़ती थीं। उनके बदले में उन्हें एक-एक सेर अनाज मिलता थे। वे अपनी सुविधा से रोज एक-एक सेर चना ले आते थे। वे अपने-अपने झोंपड़े में आते, अपने-अपने चूल्हे पर चने भूनते और खाकर सो जाते। इस तरह उनके दिन कट रहे थे।
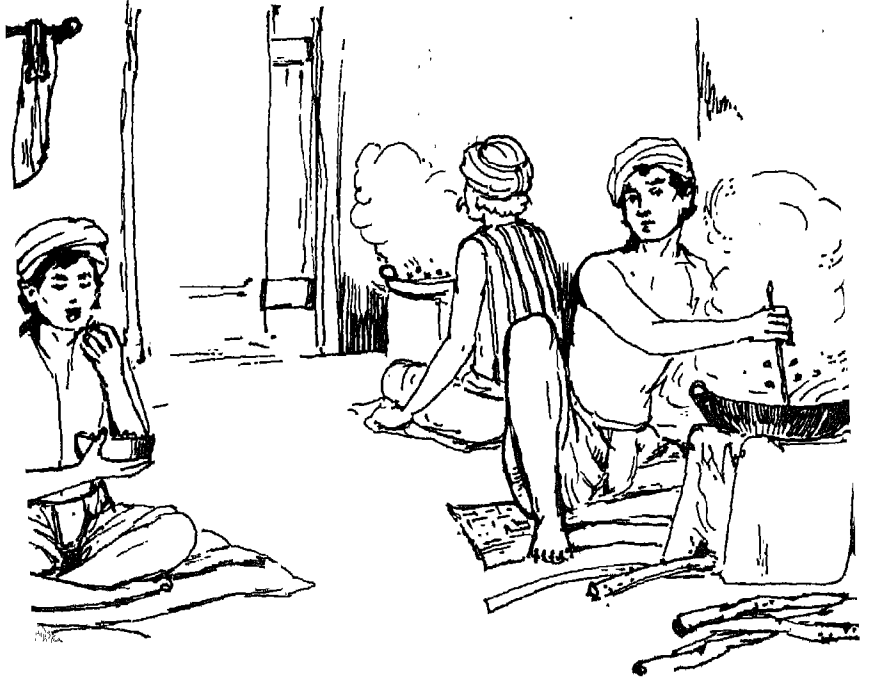
एक दिन लकड़हारे के पड़ोसी ने उससे कहा, "तुम अपने लड़कों का विवाह क्यों नहीं करते ?

लकड़हारा बोला, "अरे, घर में तो यों ही खाने का ठिकाना नहीं, लड़कों के विवाह कराकर बहुओं को क्या खिलाऊँगा ? बड़े लड़के का विवाह हुए पाँच साल बीत गए, किन्तु बहू का गौना अभी तक नहीं कराया।"

पड़ोसी बोला, "हाँ भाई, मैं तो भूल ही गया था । तुम्हें बड़ी बहू का गौना अवश्य करा लेना चाहिए ।"

लकड़हारा झुंझलाकर बोला, "अरे, उस कलमुँही का नाम मत लो । जिस महीने लड़के का विवाह हुआ और बहू मेरे घर आयी, तभी मेरी घरवाली चल बसी । अब मैं उसे यहाँ बुलाकर घर का सत्यानाश नहीं करवाऊँगा ।"

पड़ोसी ने समझाया, "भाई, मरने-जीने पर मनुष्य का क्या वश! तुम्हें अपनी बहू को अवश्य बुला लेना चाहिए । उसके भाई-भौजाई

आखिर उसे कब तक अपने यहाँ रखेंगे ? बहू को न बुलाने से तुम्हारी बहुत बदनामी होगी।"

इसी तरह और लोगों ने भी लकड़हारे से बहू का गौना कराने को कहा। आखिर अपने बड़े लड़के को बहू को लिवा लाने के लिए भेज दिया। लड़का बहू ले आया।

बहू ने देखा कि घर के स्थान पर एक टूटी-फूटी झोंपड़ी खड़ी है। वह भिखमंगों का अड्डा जैसी दिखाई देती थी। झोंपड़ी में पाँच चूल्हे बने थे। घर ने कभी झाड़ू का मुँह नहीं देखा था। कहीं चने के छिलके बिखरे थे, कहीं पर कूड़े-करकट का ढ़ेर लगा था। घर की दशा देखकर दुल्हन को रोना आ गया, पर उसने अपने भाग्य को नहीं कोसा। वह तुरंत काम में जुट गई। उसने एक चूल्हे को छोड़कर बाकी सारे चूल्हे तोड़ डाले। एक झाड़ू बनाई और घर की सफ़ाई की।

शाम को लकड़हारा अपने लड़कों के साथ घर आया। उन्होंने घर को साफ़-सुथरा देखा तो उनका मन खुश हो गया। पर जब उन्हें अपने-अपने

चूल्हे दिखाई नहीं दिये, तो वे बिगड़ पड़े । एक क्रोधित होकर बोला, "यह तो आते ही घर का सत्यानाश करने लगी है । देखो न, अपने पति का चूल्हा तो छोड़ दिया और हमारे सभी चूल्हे फोड़ डाले । अब एक चूल्हे पर इतने चने कैसे भुनेंगे ? इनके भुनने में घंटों लगेंगे । भूख के मारे हमारा दम निकल रहा है ।"

दुल्हन सब कुछ सुन रही थी । उसने एक लोटे में हाथ-पैर धोने के लिए पानी दिया और बैठने के लिए एक चटाई बिछा दी । जाड़े के दिन थे । अतः उन सबके हाथ-पैर सेंकने के लिए उसने आग भी सुलगा दी । फिर वह ससुर से बोली, "आप लोग हाथ-पैर सेकें, तब तक में खाना बनाकर लाती हूँ । " यह कहकर वह चने लेकर पड़ोसिन के यहाँ चली गयी । उसने सारे चने पीसे । आधे आटे की रोटियाँ बना लीं और आधा बचा लिया ।

इधर ये लोग भूख के मारे छटपटा रहे थे, तभी दुल्हन रोटी-साग लेकर घर आ गई । बरसों के बाद इन लोगों को ऐसा स्वादिष्ट भोजन मिला था । रोटियाँ बहुत थीं । सबने खूब ठूँस-ठूँस कर खायीं । अब तो बूढ़ा लकड़हारा और उसके बेटे नई बहू की चतुराई पर बहुत खुश हुए ।

सुबह होते ही सभी लकड़हारे लकड़ियाँ लेने जंगल को जाने लगे । बहू ने रात की बची हुई रोटी का एक-एक टुकड़ा उनको नाश्ते के लिए दिया । इससे उन लोगों को आश्चर्य हुआ । पहले तो वे एक ही शाम को सारा चना फाँक लेते थे और फिर भी उनका पेट नहीं भरता था । अब एक खानेवाला और बढ़ गया था फिर भी उतने ही अन्न से उन्होंने खूब खाया और सुबह का नाश्ता भी किया । उन्होंने उस लक्ष्मी जैसी बहू की खूब तारीफ़ की । शाम को जब लकड़हारे घर पहुँचे, तब उन्हें रोटी और बेसन की कढ़ी तैयार मिली । यह भोजन बहू ने रात को बचाये आधे आटे से बना लिया था । अब तो हाथ-पैर धोकर सभी तुरंत भोजन करने बैठ गए । वे सभी यह सोचने लगे कि ऐसी चतुर बहू को घर में न लाकर वे वर्षों व्यर्थ कष्ट उठाते रहे ।

तीसरे दिन लकड़हारे जंगल को जाने लगे, तो बहू ने कहा, "आप

सब लोग थोड़ी-थोड़ी लकड़ी अपने घर के लिए भी लाएँ।" वे बहू-लक्ष्मी की बात को टाल नहीं सके। घर के लिए सभी लकड़ी का एक-एक छोटा गट्ठा लेते आए। इन लकड़ियों को बहू ने पड़ोसियों को बेचकर घर में नमक, तेल, मसाले आदि का इंतजाम कर लिया।

एक दिन बहू ने ससुर से पूछा, "आप लोगों को ज़मींदार मज़दूरी में केवल चने ही देता है या दूसरा अनाज भी दे सकता है ?"

ससुर बोला, "ज़मींदार कोई भी अनाज एक-एक सेर दे सकता है। हम लोग तो अपनी सुविधा से चने ले आते हैं।"

बहू ने कहा, "तो अब से रोज़ नया-नया अनाज लाया कीजिए। आज मज़दूरी में चावल ले आइए।"

"बहुत अच्छा, " ससुर ने कहा। उस दिन सभी मज़दूरी में चावल लाए। अब तो उन लोगों को भोजन में भात, कढ़ी, साग-रोटी भी मिलने लगे। ऐसा अच्छा भोजन इन लोगों ने पहले कभी खाया ही नहीं था। वे सभी बहुत खुश हुए। बूढ़ा लकड़हारा अब उसे "लक्ष्मी-बहू" कहता और देवर उसे "लक्ष्मी-भाभी"।

लकड़हारे मज़दूरी में अनाज बदल-बदलकर लाते थे। अब उस घर में गहूँ, चना, दाल तथा गृहस्थी का सभी सामान जुटने लगा। बहू रोज़ मज़दूरी के अनाज में से आधा अनाज बचाकर रखती थी। उसने मिट्टी के छोटे-छोटे बर्तन बना लिए थे। अब उस झोंपड़ी में रौनक आ गई थी।

कुछ महीने बाद बहू ने बूढ़े ससुर का मज़दूरी पर जाना बंद करवा दिया और उसे गाँव में ही एक छोटी-सी दुकान खुलवा दी। दुकान चल निकली और उससे अच्छी आय होने लगी। अब गाँव में उन लोगों की मान-प्रतिष्ठा भी बढ़ने लगी। उन्होंने छोटी-मोटी जायदाद भी खड़ी कर ली। उनका जीवन आनन्दमय हो गया। यह सब बहू-लक्ष्मी की चतुराई और मेहनत से हुआ।

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. बहू के आने से पहले लकड़हारा और उसके बेटे अपने पेट कैसे भरते थे ?
2. बहू ने एक चूल्हे को छोड़कर बाकी सारे चूल्हे तोड़ डाले। क्यों?
3. बहू ने नमक, तेल, मसाले आदि का प्रबंध कैसे किया ?
4. लकड़हारा बहू को बहू-लक्ष्मी क्यों कहने लगा।

II. प्रत्येक वाक्य के सामने दिए गए शब्दों में उचित शब्द चुनकर वाक्य पूरे कीजिए –

1. शादी के बाद दुबारा बहू को बुलाना -------- कहा जाता है।
(मिलनी/गौना/ विदाई)
2. आज से आप रोज़ाना -------- अनाज लाया कीजिए।
(कोई-कोई/नया-नया/अच्छा-भला)
3. उसके ------- अब उसे लक्ष्मी-भाभी कहने लगे।
(देवर/ससुर/जेठ)
4. टूटी-फूटी झोंपड़ी भिखमंगों का -------- सा दिखाई देती थी।
(जमघट/अड्डा/घर)

बहादुर बीरसा

बीरसा छोटा नागपुर का एक आदिवासी था। उसे आदिवासी लोग अपना नेता मानते थे। राँची में गरेरिया उलिहातू एक छोटा-सा गाँव है, जिसमें बीरसा का जन्म सन् 1874 ई. के आसपास हुआ था। वह कठिनाई से परिवार का पालन करता था और दुष्ट दिकू महाजनों तथा अँग्रेजों से लड़ता रहता था।

बचपन में ही उसने अपने बहादुर पिता से तीर-कमान तथा दूसरे हथियार चलाना सीख लिया था। वह अचूक निशाना मारता। अपनी मौसी के गाँव खटंगा में उसने एक मिशनरी स्कूल में अपनी शिक्षा प्रारम्भ की। पढ़ने में उसकी रुचि थी। वह दिन-ब-दिन तरक्की करने लगा। स्कूल से लौटकर वह बकरी चराता। जंगलों में ही जमीन पर लिखने का अभ्यास करता, और कभी-कभी तो इतना मगन हो जाता कि बकरियों को भूल जाता। एक दिन बकरियों को भेड़िया उठा कर ले गया। जब उसे इसका ध्यान आया, वह हक्का-बक्का रह गया। वह भारी कदमों से घर लौटा। मौसी को जब बकरियाँ खोने की खबर मिली, तो वह आग-बबूला हो गई। बीरसा को भारी मार खानी पड़ी। अंत में दुखी होकर बीरसा ने खटंगा छोड़ दिया और अपने बड़े भाई कोम्ता के पास रहने लगा।

बीरसा को बचपन से बाँसुरी बजाने का शौक था। वह बिना गुरु के स्वयं ही अभ्यास करता। जंगल में चला जाता और मगन होकर बाँसुरी बजाता। उसे बाँसुरी बजाने का इतना अच्छा अभ्यास हो गया था कि

बाँसुरी की धुन सुनकर चिड़ियाँ उसके कंधे पर आ बैठतीं। वह हिरनों को भी बाँसुरी की टेर से पास बुला लेता। उसकी कला का चमत्कार देखकर लोग हैरान होते।

गाँव में एक धनी ब्राह्मण थे। उनका नाम था आनंद पांडे। बीरसा ने उनके यहाँ नौकरी कर ली और मन लगा कर सेवा करने लगा। आनंद पांडे भी उसे भरपूर प्यार देते। बीरसा ने उनसे रामायण और महाभारत की कथाएँ सुनीं।

वह फिर से मिशन स्कूल में पढ़ने लगा। बहुत से मुंडा सरदारों को मिशन में रखा गया था। उन्हें सारी सुविधाएँ दी गई थीं। बीरसा को भी वैसी ही सुविधाएँ मिलने लगीं।

1879 ई. में मुंडा लोगों ने सरकार को अर्जी लिखी, जिसमें उन्होंने कहा था कि छोटा नागपुर की जमीन उनकी मिल्कियत है। पर उस अर्जी पर कोई कदम नहीं उठाया गया। 1881 ई. में सरदारों का एक दल मिशन छोड़कर निकल आया। वे अपनी जमीन पाने के लिए दृढ़ संकल्प थे। इस बात पर चिढ़कर मिशन के फ़ादर नैट्रेट ने कहा, "सरदार धोखेबाज़ हैं, ठग हैं।"

इस बात से बीरसा के मन को गहरी चोट लगी। वह निर्भीक स्वर में लड़कों के बीच बोला, "फ़ादर बदमाश है। वह हमारे सरदारों को धोखेबाज कहता है। सरदार मिशन छोड़ गए, इसलिए साहब को गुस्सा आया है।"

लड़कों ने सारी बातें फ़ादर को बता दीं। उसने बीरसा को बुलाकर पूछा, "बीरसा, तुम मिशन की चुगलियाँ क्यों करते हो ?"

"आप लोग सरदारों को धोखेबाज क्यों कहते हैं ? उनको गाली क्यों देते हैं ?"

"वे धोखेबाज हैं।"

"नहीं, वे हमारे अधिकारों के लिए लड़ रहे हैं। अपनी धरती के लिए लड़ रहे हैं। इसमें धोखा क्या है ?"

बीरसा की बातों से फ़ादर नैट्रेट अवाक् रह गए। उनके मन में बीरसा के प्रति भी अविश्वास पैदा हो गया।

उन दिनों आदिवासियों की दशा बड़ी खराब थी। उनके लिए भात सपने के समान था। बीरसा के परिवार को भी कई-कई दिन भूखों सोना पड़ता था। भूख और रोग से पीड़ित आदिवासी मुंडारियों की दुर्दशा देख कर बीरसा बहुत दुखी रहता। हमेशा सोचता कि किसी तरह उनका जीवन सुखमय हो। उनका अपना घर, अपनी जमीन, अपनी जायदाद हो।

एक दिन बीरसा भी मिशन छोड़कर बाहर आ गया और मुंडा लोगों में चेतना भरने लगा। वह जी-जान से कोशिश करता कि उसके भाई जल्द होशियार हो जाएँ और अज्ञान तथा रूढ़ियों से छुटकारा पाकर इस लायक बनें कि अपने हक के लिए लड़ सकें।

बीरसा लोगों को खुले आम उपदेश देता, "तुम अनेक देवी-देवताओं को छोड़कर केवल एक भगवान "सिबोंगा" की पूजा करो। सभी जीवों पर दया करो। सभी भगवान की संतान हैं। शिकार मत करो। जीव-हत्या पाप है। मांस खाना और शराब पीना छोड़ दो। रोगियों की सेवा करो।"

इससे लोग प्रभावित हुए। उसके समर्थकों की संख्या बढ़ने लगी। लोग उसके इशारे पर मर-मिटने को तैयार रहते।

वह आज़ादी की लड़ाई में कूद पड़ा। उसने भारत को गुलामी की बेड़ी में जकड़कर रखने वाले अंग्रेजों को देश से भगाने का प्रण किया था। इसके लिए जी-तोड़ मेहनत कर उसने आदिवासी युवकों का संगठन तैयार किया। उन्हें तीर और तलवार चलाने की शिक्षा दी। गया मुंडा उसके संगठन का सेनापति और मंत्री था।

अंत में उसने खुलकर अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता की लड़ाई छेड़ दी। अनेक स्थानों पर जमकर लड़ाई हुई। उसने जब देखा कि अंग्रेज सेना का सामना करना कठिन है, तब वह पत्नी के साथ जंगल में छिप गया।

एक दिन उसे भात खाने की इच्छा हुई। पत्नी भात पकाने लगी। वह सो रहा था। तभी किसी ने अंग्रेजों को खबर कर दी। बीरसा पकड़ा गया। बीरसा के हाथों में हथकड़ियाँ थीं। दोनों ओर सिपाही थे। सिर पर पगड़ी थी। धोती पहने था। बदन पर और कुछ नहीं था। रास्ते के दोनों ओर लोग खड़े थे। सभी मुंडा थे। औरतें छाती पीट रही थीं। आकाश की ओर हाथ उठा कर कह रही थीं, "जिन्होंने तुम्हें पकड़वाया है, वे माघ महीना

भी पूरा होते न देख पाएँगे। उनकी जल्दी मौत होगी। भगवान तुम्हें जल्दी मुक्त करे।"

बीरसा के पकड़े जाने पर सारे छोटा नागपुर में तहलका मच गया उसने जो "उलगुलान" यानी विद्रोह छेड़ रखा था, वह काफी आगे बढ़ चुका था। लोगों में काफी जागृति आ गई थी। मुंडारी लोगों को कब्जे में करना अंग्रेजों के लिए भारी पड़ रहा था।

9 जून, 1900 ई. को राँची की जेल में खून की उल्टी करते-करते उसकी मृत्यु हो गयी। आज भी मुंडारी आदिवासी बीरसा को भगवान के रूप में याद करते हैं। वह इतिहास का जीवित पुरुष है।

बोध प्रश्न

I उत्तर दीजिए –

1. बचपन में बीरसा ने अपने पिता से क्या-क्या सीखा ?
2. सरदारों के दल ने मिशन क्यों छोड़ा ?
3. बीरसा के प्रति नैट्रेट के अविश्वास का क्या कारण था ?
4. उन दिनों आदिवासियों की दशा कैसी थी ?
5. आदिवासी बीरसा को किस रूप में याद करते हैं ?

II. सही उत्तर चुनकर खाली स्थान भरिए –

1. वह कठिनाई से परिवार का पालन करता था क्योंकि -।

   (क) वह आलसी था।
   (ख) उन दिनों आदिवासियों की दशा बड़ी खराब थी।

(ग) वह दिकू महाजनों और अंग्रेजों से लड़ता रहता था।

2. उसे ज़मीन पर लिखने का अभ्यास करना पड़ता था क्योंकि ---------------------------------।

(क) वह जंगल में बकरियाँ चराता था।
(ख) उसे जमीन पर लिखने में सुविधा होती थी।
(ग) वह बहुत गरीब था।

3. उसने खटंगा छोड़ दिया क्योंकि ----------------------।

(क) मौसी ने उसे बहुत मारा था।
(ख) उसके बड़े भाई कोम्ता ने उसे बुलाया था।
(ग) बकरियों को भेड़िया उठा कर ले गया था।

4. मुंडा सरदारों के एक दल ने मिशन छोड़ दिया क्योंकि ---------------------------।

(क) अंग्रेजों ने उनकी जमीन उन्हें नहीं दी।
(ख) फ़ादर नैट्रेट ने उन्हें धोखेबाज़ कहा।
(ग) उनकी सारी सुविधाएँ छीन ली गईं थीं।

5. बीरसा बहुत दुखी रहता क्योंकि ----------------------।

(क) मुंडारियों के पास जमीन-जायदाद नहीं थी।
(ख) मुंडारी बहुत आलसी थे।
(ग) मुंडारी भूख और रोग से पीड़ित थे।

लालू

लालू उसको पुकारने का नाम था। कोई दूसरा नाम अवश्य था, मगर वह याद नहीं। सभी उसे प्यार करते थे। हम कालिज में पढ़ते थे और वह काम करने लगा। जाते हुए रास्ते में अक्सर उससे मुलाकात होती थी। ठेकेदार लालू छाता लगाए मज़दूरों से सड़क की छोटी-मोटी मरम्मत का काम करवाता रहता। हमें देख, हँसकर मज़ाक करते हुए कहता, "जा, दौड़कर जा, नहीं तो हाज़िरी रजिस्टर में नाम नहीं चढ़ेगा।"

बचपन में जब हम बंगला स्कूल में पढ़ते थे तब वह सब कामों का मिस्त्री था। जैसे, सारे स्कूल के टूटे छातों की मरम्मत, स्लेट की मढ़ाई, खेलने में फटे कुर्ते की सिलाई, इस तरह के कितने ही काम वह करता था। किसी काम के लिए वह कभी "ना" नहीं करता था। काम भी वह बहुत अच्छा करता था।

इस तरह एक के बाद एक कई साल बीत गए। जिमनास्टिक के अखाड़े में लालू की बराबरी का कोई नहीं था। उसमें जैसी असाधारण ताकत थी, वैसा ही असीम साहस भी था। डर किसे कहते हैं, वह जानता तक नहीं था। सभी की पुकार वह सुनने के लिए तैयार रहता था। सभी की मुसीबतों में वह हाजिर होता था। उसमें केवल एक बड़ा दोष था। किसी को डर दिखाने का मौका मिलने पर वह किसी तरह अपने को रोक नहीं पाता था। इस मामले में लड़के, बूढ़े, गुरुजन सभी उसके लिए

बराबर थे। हमारी समझ में नहीं आता था कि डर दिखाने की विचित्र तरकीबें उसे कैसे सूझ जाती थीं।

एक बार मनोहर चट्टोपाध्याय के यहाँ काली की पूजा होने वाली थी। आधी रात तक लोहार नहीं पहुँचा था। उसे लाने के लिए आदमी दौड़ाया गया। लेकिन वह बीमार था। अब क्या किया जाए ? इतनी रात को बलि देने वाले कहाँ मिलें ? देवी की पूजा चौपट होने जा रही थी। किसी ने कहा, "लालू बकरा काट सकता है। उसने कितने ही बकरे काटे हैं"। उसके पास आदमी दौड़ाए गए। लालू नींद से उठ बैठा। उसने कहा, "नहीं।"

"नहीं कैसे कहते हो ? देवी पूजा में विघ्न होने से सर्वनाश हो जाएगा।"

लालू ने कहा, "होने दो। बचपन में यह काम किया है मगर अब नहीं करूँगा।" जो बुलाने आये थे वे निराश हो गए। अब दस-पन्द्रह मिनट रह गए थे। इसके बाद सब नष्ट हो जाएगा। तब महाकाली के क्रोध से कोई नहीं बचेगा। लालू के पिता ने कहा – "दूसरा उपाय न होने के कारण ये आए हैं, न जाने से अनिष्ट होगा। तुम जाओ।" उस आदेश को टालने की हिम्मत लालू में नहीं थी।

लालू को देखकर चट्टोपाध्याय की चिंता दूर हुई। समय नहीं था। जल्दी में बकरे को तैयार किया गया। उसके माथे पर सिन्दूर लगाकर, गले में जवाकुसुम की माला पहनाकर उसे बलिवेदी पर खड़ा कर दिया गया। माँ, माँ के जयघोष से वातावरण गूँज उठा और बकरे का अंतिम आर्तनाद उसमें विलीन हो गया। लालू के हाथ का खड्ग क्षण-भर में ऊपर उठकर जोर से नीचे गिरा। इसके बाद बलि के कटे मस्तक से खून के फव्वारे ने काली मिट्टी को लाल कर दिया। लालू क्षण-भर आँखें बंद किए रहा। ढोल, घंटे, घड़ियाल का खूब शोर हुआ और फिर धीरे-धीरे यह भी बंद हो गया। दूसरा बकरा निकट ही खड़ा धीरे-धीरे काँप रहा था। उसके माथे पर भी सिन्दूर लगाया गया, गले में माला डाली गई, फिर वही बलिवेदी,

वही भयंकर अंतिम आर्तनाद, वही बहुकण्ठों की सम्मिलित "माँ, मां," की आवाज ! फिर लालू ने खून से रंगा खड्ग ऊपर उठाया और खड्ग क्षण-भर में नीचे आ गया । बकरे का कटा सिर जमीन पर गिर पड़ा । उसके कटे गले के खून की धार ने लाल मिट्टी को और लाल बना दिया । ढोल बजाने वाले मस्त होकर बजा रहे थे । सामने के बरामदे में गलीचे पर बैठे मनोहर चट्टोपाध्याय आँखें मूँदकर इष्ट नाम का जाप कर रहे थे । अकस्मात् लालू ने एक भंयकर हुंकार की । सारा कोलाहल बंद हो गया । सभी स्तब्ध थे । यह क्या ? लालू की फैली हुई आँखों की पुतलियाँ मानों फूल रही थीं । उसने चिल्लाकर कहा, "और बकरे कहाँ हैं ?"

घर के किसी एक आदमी ने डरते हुए जवाब दिया, "अब तो बकरे नहीं हैं । हमारे यहाँ दो ही बकरे चढ़ाए जाते हैं ।"

लालू ने खून से रँगे खड्ग को दो बार अपने सिर पर नचाकर भीषण कर्कश स्वर में गर्जन किया । "नहीं है बकरा, यह नहीं हो सकता । मेरे ऊपर खून सवार हो गया है । बकरे दो, नहीं तो आज मैं जिसे पाऊँगा उसी को पकड़कर बलि चढ़ाऊँगा ।

उसने लम्बी कुदान भरी और बलिवेदी के पास जा पहुँचा। उसके हाथ का खड्ग चर्खी की तरह घूम रहा था। उस समय जो घटना घटी, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

सभी एक साथ बड़े दरवाजे की ओर दौड़ पड़े – कहीं लालू पकड़ न ले। भागने की कोशिश में रेलम-पेल मच गई। कई लुढ़क गए, कई घुटनों के बल निकलने की कोशिश कर रहे थे। किसी की गरदन किसी की काँख में फँस जाने के कारण दम घुट रहा था। कोई किसी के ऊपर से भागने की कोशिश में मुँह के बल गिर पड़ा था। लेकिन यह सब क्षण-भर में समाप्त हो गया। इसके बाद कहीं कोई नहीं रहा।

लालू ने गरजकर कहा, "मनोहर चट्टोपाध्याय कहाँ है ? पुरोहित कहाँ गया ? " पुरोहित दुबले पतले आदमी थे। भगदड़ से फायदा उठाकर पहले ही मन्दिर के पीछे जा छिपे थे। गुरुदेव आसन पर बैठे चण्डी का पाठ कर रहे थे। वे जल्दी से उठकर बाड़ी के एक मोटे खम्भे के पीछे जा छिपे थे। लेकिन विशाल शरीर लेकर मनोहर के लिए दौड़-धूप करना कठिन था। लालू ने आगे बढ़कर बाएँ हाथ से उनका एक हाथ पकड़ लिया। बोला, "चलो, बलिवेदी में सिर डालो।"

एक तो उसकी पकड़ वज्र जैसी थी, दाहिने हाथ में खड्ग भी था, डर के मारे चट्टोपाध्याय के प्राण-पखेरू उड़ना चाहते थे। रुँआसी आवाज में विनती करने लगे, "लालू भैया। शान्त होकर देखो, मैं बकरा नहीं हूँ, आदमी हूँ। मैं तुम्हारा ताऊ लगता हूँ। भैया, तुम्हारे पिता के बड़े भाई जैसा हूँ।"

"मैं कुछ नहीं जानता। मेरे ऊपर खून सवार है। चलो, तुम्हें बलि चढ़ाऊँगा। माँ का आदेश है।"

चट्टोपाध्याय फफ्क-फफककर रो पड़े, "नहीं भैया, माँ का आदेश नहीं है। कभी नहीं है, माँ जगत- जननी है।

लालू ने कहा, "जगत-जननी" ! तुम्हें इतनी अक्ल है ? फिर बकरा चढ़ाओगे ? बकरा काटने के लिए मुझे बुलाओगे ? बोलो ?"

चट्टोपध्याय ने रोते हुए कहा, "कभी नहीं भैया, फिर कभी नहीं। माँ के सामने तीन बार कसम खाता हूँ। आज से मेरे घर में बलि बन्द हुई।"

"सच कहते हो ?"

"बिल्कुल सच भैया। फिर कभी नहीं। मेरा हाथ छोड़ दो भैया।"

लालू ने हाथ छोड़कर कहा, "अच्छा जाओ। तुम्हें छोड़ दिया, लेकिन पुरोहित कहाँ भागा ? गुरुदेव कहाँ हैं ?" इतना कहते हुए उसने गरजकर एक छलाँग मारी। उसके ठाकुर बाड़ी की ओर बढ़ते ही मूर्ति के पीछे से और खम्भे की ओर से दो भिन्न-भिन्न गलों से रोने की आवाज सुनाई पड़ी। महीन और मोटी, इन दोनों आवाजों के मेल से एक विचित्र और हँसी आने वाली आवाज निकली। अब लालू अपनी हँसी न रोक सका। "हः हः हः" हँसकर खड्ग को ज़मीन पर पटककर एक छलाँग में वह घर छोड़कर निकल गया।

तब बात सबकी समझ में आ गई। खून सवार होने की बात झूठ थी। लालू इतनी देर तक सबको डरा रहा था। पाँच मिनट में जो जहाँ भागे थे, फिर आ गए। काली की पूजा अभी बाकी थी। उसमें काफी विघ्न हो गया
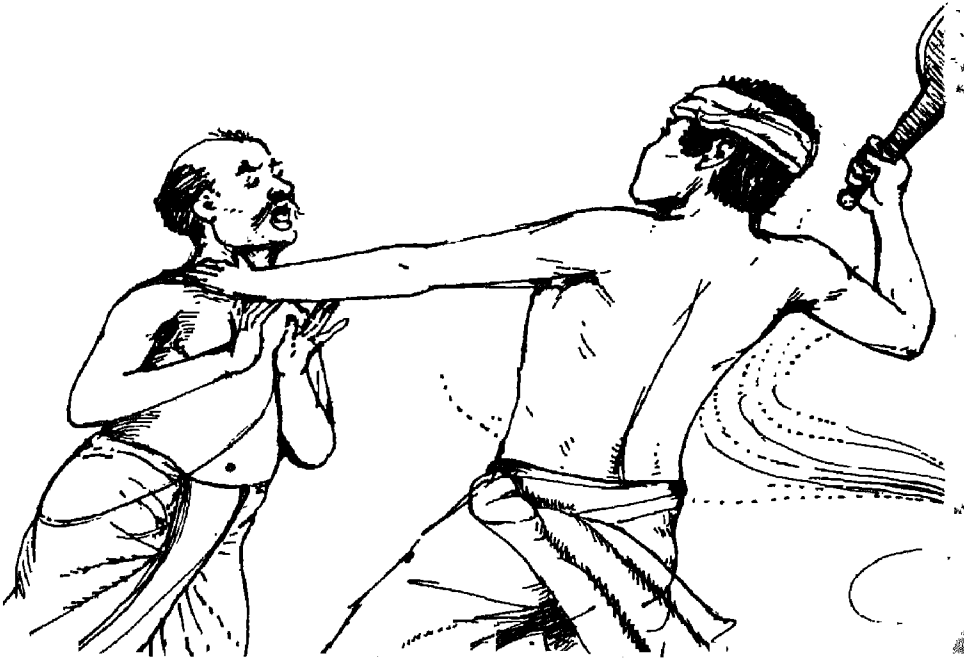
था । चट्टोपाध्याय महाशय बार-बार प्रतिज्ञा करने लगे कि उस शैतान लड़के को अगर कल सवेरे ही उसके बाप से पचास जूते नहीं लगवाऊँ तो मेरा नाम मनोहर चट्टोपाध्याय नहीं ।

लेकिन जूते उसे खाने नहीं पड़े । वह सबेरे ही उठकर कहीं भाग गया। सात-आठ दिन तक उसका पता ही नहीं चला । सात दिन के बाद एक दिन अंधेरे में मनोहर चट्टोपाध्याय के घर में घुसकर उनसे माफी माँगी । इस तरह लालू ने बाप के क्रोध से किसी तरह छुटकारा पाया । लेकिन जो भी हो, देवी के सामने शपथ लेने के कारण चट्टोपाध्याय के यहाँ काली की पूजा में तब से बकरे की बलि बंद हो गई ।

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. लालू में क्या दोष था ?
2. लालू के पास आदमी क्यों भेजा गया ?
3. किस आशय से लालू के ने पिता उसे जाने का आदेश दिया ?
4. दूसरी बलि के बाद लालू में क्या परिवर्तन हुआ ?
5. बलि के समय लोगों में भगदड़ मचने का क्या कारण था ?
6. लालू ने चट्टोपाध्याय से क्या प्रतिज्ञा करवाई ?

II. दिए गए शब्दों को खाली स्थानों पर भरो –

1. उसमें जैसे असाधारण बल है ------------- असीम साहस भी है ।

2. देवता की पूजा में ---------------- सर्वनाश हो सकता है।
3. "भारत माता की जय" के घोष से वातावरण ----------------।
4. खून की धार से लाल मिट्टी ---------------- हो गई।
5. चट्टोपाध्याय ने कसम खाकर कहा कि आज से मेरे घर में ----------------।

(गूँज उठा, वैसा ही, बलि बंद हुई, विघ्न होने से, और लाल)

मित्र का ऋण

वे दोनों मित्र थे। बड़े ही अभिन्न, बड़े सच्चे। प्रकृति ने दोनों को भिन्न-भिन्न साँचे में ढाला था। एक कायर था, दूसरा निर्भीक, एक मेहनती था दूसरा आलसी, किन्तु फिर भी दोनों मित्र थे। मित्र भी साधारण नहीं, एक दूसरे पर प्राण न्यौछावर करने वाले।

ये दोनों लड़के इंग्लैंड के सुप्रसिद्ध वेस्टमिंस्टर स्कूल में पढ़ते थे। एक का नाम निकोलस और दूसरे का नाम बेक था। बेक को सत्य से प्रेम था और निकोलस को असत्य से। एक दिन की बात है, स्कूल में दोनों अपने-अपने स्थान पर बैठे पढ़ रहे थे। शिक्षक महोदय कुछ देर के लिए बाहर चले गए। दोनों ने पढ़ना बंद कर दिया। सभी लड़कों ने वैसा ही किया। सब के सब पढ़ाई बंद करके ऊधम मचाने लगे। निकोलस ने सोचा, कोई ऐसा काम करना चाहिए जिससे सब को मजा आए।

निकोलस स्कूल में इधर-उधर अपनी नजर दौड़ाने लगा। उसने देखा सामने खिड़की में साफ शीशा लगा हुआ है। निकोलस मन-ही-मन सोचने लगा यदि इसको फोड़ दूँ, तो मजा आएगा। किन्तु नहीं, यह बहुत उत्पात है। मैं ऐसा नहीं करूँगा !

निकोलस अभी सोच ही रहा था कि उसके हाथ आगे बढ़ गये। एक साधारण-सा धक्का, और बस, शीशा टूट गया। निकोलस का हृदय काँप उठा, बिलकुल पत्ते की भाँति। चेहरा पीला पड़ गया। आँखों के सामने

एक चित्र नाच उठा, शिक्षक सजा देंगे। आश्चर्य नहीं, स्कूल से भी निकाल दें। फिर उसका जीवन !

निकोलस सिर झुकाकर अपने स्थान पर जा बैठा। उसकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया। वह मन-ही-मन न जाने क्या सोच रहा था। साथियों ने किसी प्रकार शीशे को जोड़कर फिर खिड़की में लगा दिया। शिक्षक आए। कमरे में सन्नाटा, छा गया। कोई सिर भी नहीं हिला रहा था। मानों मौन रूप से सब के सब निकोलस के अपराध की घोषणा कर रहे हों। शिक्षक को आश्चर्य हुआ। वे इस रहस्य को जानने के लिए कमरे में चारों ओर अपनी नज़र दौड़ाने लगे।

टूटा हुआ शीशा खिड़की पर रो रहा था। शिक्षक को संदेह हुआ। वे उठकर शीशे के समीप गये। खिड़की का शीशा टूटा हुआ था। वे क्रोध से गरज पड़े। उन्होंने आँखों में क्रोध भरकर कहा, "जिसने यह शरारत की है, वह खड़ा हो जाए।" किन्तु कोई खड़ा नहीं हुआ। खड़ा होने की कौन कहे, किसी ने उत्तर तक नहीं दिया। शिक्षक का क्रोध उबल पड़ा। वे हर लड़के से पूछने लगे। उन्होंने निकोलस से भी पूछा। निकोलस मन में सोचने लगा, "क्या कहूँ" "तोड़ा है" न, न, मैं नहीं कहूँगा। उसने साफ़ इनकार कर दिया।

अब बेक की बारी आई। वह निकोलस के पास ही बैठा था। उसने सोचा, "निकोलस मेरा मित्र है। उसने अपराध किया है, किन्तु वह उसे अस्वीकार कर रहा है। उसका अपराध मैं क्यों न अपने सिर ले लूँ ? मित्र को ऐसा ही तो करना चाहिए।

बेक बोल उठा, "शीशे को मैंने तोड़ा है।" लड़के आश्चर्यचकित होकर उसकी ओर देखने लगे। निकोलस शर्म से पानी-पानी हो गया। बेक पर मार पड़ने लगी। चमड़ी छिल गई, शरीर पर नीले-नीले दाग पड़ गये। देखने वाले सिहर उठे, किन्तु बेक के चेहरे पर दृढ़ता और विजय की भावना थी।

छुट्टी हुई। साथियों ने बेक को घेर लिया। वे कह रहे थे, मित्र हो तो
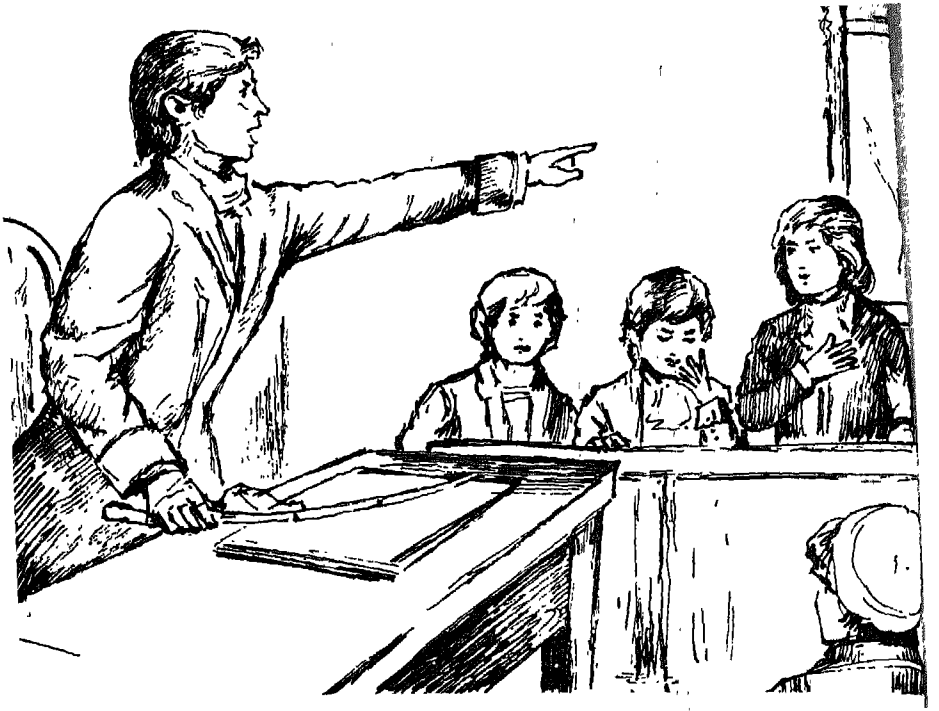
ऐसा हो। निकोलस चुपचाप खड़ा था। आँखों में आँसू थे। वह मन ही मन अपने को धिक्कार रहा था। अन्त में वह बेक के सामने गया। उसकी आँखें भरी थीं, गला रुँधा हुआ था। उसने बड़ी ही कठिनाई से रुँधे हुए स्वर में कहा, "बेक तुमने अपने इस त्याग से मेरे भीतर एक नई ज्योति पैदा कर दी है। मुझ पर तुम्हारा यह बहुत बड़ा ऋण है। मैं तुम्हारे इस ऋण को कभी नहीं भूलूँगा।

चालीस वर्ष पश्चात् दोनों मित्र दो अलग-अलग दिशाओं में थे। निकोलस न्यायधीश था और बेक सेनानायक। उन दिनों इंग्लैंड में क्रामवेल का शासन था। राजतंत्र और प्रजातंत्रवादियों में मुठभेड़ें हो रही थीं। बेक राजतंत्रवादियों की ओर से युद्ध कर रहा था। राजतंत्रवादी पराजित हुए। वह भी पराजित हो गया और अपने साथियों के साथ बंदी करके एकजिस्टर भेज दिया गया।

एकजिस्टर में निकोलस न्यायाधीश था। वहीं निकोलस का मित्र बेक बंदी रूप में न्यायालय में उपस्थित किया गया। प्रजातंत्र के शासक क्रामवेल का आदेश था – राजतंत्रवादी कैदियों के लिए मृत्यु। निकोलस बारी-बारी

से सब को मृत्यु-दण्ड देने लगा। जब कर्नल बेक नाम लिया गया, तो वह आश्चर्यचकित होकर उसकी ओर देखने लगा। उसने उसे देखा, पहचाना, किन्तु कर्तव्य ने उसे विवश कर दिया था। उसने कुछ सोचा और तब निर्णय देते हुए कहा, "चार दिन के पश्चात् सब को फाँसी दे दी जाए।"

किन्तु निकोलस की आत्मा व्याकुल हो उठी। पागलों की तरह वह न्यायमंच से उठकर अपने कमरे के भीतर भाग गया। नौकर, चाकर, सिपाही, सैनिक सभी अवाक्। किसी की समझ में कुछ न आया। सब आपस में तरह-तरह की कल्पनाएँ करने लगे। इधर निकोलस ने कमरे के भीतर नौकर को बुलाकर उसके सामने चाँदी के कुछ सिक्के फेंक दिए और कहा, "मेरे लिए एक ऐसा घोड़ा लाओ, जो एकजिस्टर में सबसे तेज हो। कुछ देर बाद लोगों ने देखा कि निकोलस हवा से बातें करते हुए लन्दन की ओर भागा। वह अपने मित्र बेक को बचाना चाहता था और इसीलिए क्रामवेल के पास लन्दन जा रहा था। दो रात और एक दिन वह घोड़े की पीठ पर ही रहा। इतनी लम्बी यात्रा में वह केवल तीन बार रुका था और वह भी केवल घोड़ा बदलने के लिए।

सवेरा हो रहा था । लन्दन में क्रामवेल के कमरे में पसीने से लथपथ निकोलस खड़ा था । क्रामवेल ने उसकी ओर आश्चर्य से देखा । उसके मुख से निकल पड़ा, "कौन, न्यायधीश निकोलस ! यहाँ, इस समय, ऐसी दशा में ।"

निकोलस ने कहा, "हाँ, मैं हूँ निकोलस । मुझ पर अपने मित्र का बहुत बड़ा ऋण है । अब समय आ गया है कि मैं उस ऋण को चुका दूँ, किन्तु आपकी सहायता के बिना यह असम्भव है ।

क्रामवेल आश्चर्यचकित होकर निकोलस की ओर देखने लगा । उसने कहा, "मित्र का ऋण चुकाने में मेरी सहायता ?"

निकोलस ने उत्तर दिया, "हाँ आपकी सहायता । प्रजातंत्र के शासक क्रामवेल की सहायता ।"

निकोलस ने अपनी और बेक की मित्रता की कहानी क्रामवेल को सुना दी । उसने कहा, "आज मैं जो कुछ बन सका हूँ, वह केवल बेक के ही कारण । बेक ने ही मुझे इस स्थान पर पहुँचाया है । बेक ने यदि शीशा

फोड़ने के मेरे अपराध को अपने ऊपर न ले लिया होता तो मेरे प्राणों में सत्य की ज्योति न जगती। मैं कायर था। कायर बना रहता और आज न जाने कहाँ पर होता। अपने उसी प्राण-प्यारे मित्र के लिए मैं, आपसे क्षमादान चाहता हूँ। यदि आप उसे क्षमादान न देंगे, तो वह दो दिन के बाद ही इस संसार से मिट जाएगा और उसके साथ ही निकोलस भी मिट जाएगा।"

क्रामवेल बड़ा ही कठोर था, बड़ा ही उग्र। अपने विरोधियों के प्रति उसके हृदय में रंचमात्र भी दया, माया न थी। किन्तु निकोलस और बेक की मित्रता की कहानी ने उसकी भी आँखों में आँसू छलका दिए। उसने क्षमादान का पत्र लिखकर निकोलस को देते हुए कहा, "आखिर मैं भी तो मनुष्य हूँ, निकोलस।"

निकोलस उसी समय वहाँ से चल पड़ा और एकजिस्टर पहुँचकर शीघ्र ही जेलख़ाने में जा पहुँचा। बेक एक कोठरी में बंदी के रूप में बैठा था। उसने क्षमादान का पत्र बेक की ओर बढ़ाकर उसे अपनी भुजाओं में कस लिया और रुँध हुए गले से कहा, "क्या मुझे भूल गये बेक ?"

बेक ने भी उसी स्वर में उत्तर दिया, "तुम भी कभी भुलाये जा सकते हो, निकोलस !" दोनों मित्रों की आँखें डबडबा रही थीं।

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. मित्र का ऋण क्या था ?
2. बेक ने शीशा तोड़ने का अपराध अपने ऊपर क्यों लिया ?
3. बेक को दंड मिलने के बाद निकोलस पर क्या प्रभाव पड़ा ?

4. निकोलस ने चार दिन के बाद फाँसी देने का निर्णय क्यों लिया?

5. क्रामवेल पर निकोलस की प्रार्थना का क्या प्रभाव पड़ा ?

6. विपत्ति में मित्र ही मित्र के काम आता है, उपर्युक्त कथन को कहानी के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

II. नीचे दिए गए कथनों को सही क्रम में लिखिए –

1. निकोलस का शर्म से पानी पानी होना
2. क्रामवेल द्वारा क्षमादान
3. राजतंत्र और प्रजातंत्रवादियों में मुठभेड़
4. साधारण धक्के से शीशे का टूटना
5. सबको फाँसी दिया जाना

सिपाही की विदाई

आज सन् 1948 के जुलाई महीने की 17 तारीख है।

संध्या का समय था। टीटवाल की दक्षिणी पहाड़ी पर धीरे-धीरे अंधेरा हो चला था। यह वही पहाड़ी है, जहाँ कुछ ही घंटों में कश्मीर के भविष्य का फैसला होने वाला है। कुछ ही देर बाद यहाँ की धरती सैनिकों के रक्त से रंजित हो जाएगी। चीत्कारों और उत्साह-भरी हुंकारों से टीटवाल का शांत वातावरण सहसा भंग हो जाएगा।

पहाड़ी के शिखर पर पाकिस्तानी कबाइलियों का तगड़ा मोर्चा है। दिन-भर ऊपर-नीचे उनकी अच्छी-खासी दौड़-धूप रही। अब कबाइली सेना पहाड़ी के उस पार चली गई है। पहाड़ी एकदम सुनसान हो चली है।

कुछ देर बाद पहाड़ी के नीचे कुछ हलचल आरम्भ हो गई है। ये भारतीय सिपाहियों की ही एक टुकड़ी के जवान हैं। गिनती में कितने होंगे, इस झुटपुटे में ठीक नहीं कहा जा सकता। पर हैं थोड़े, बहुत थोड़े– कबाइलियों के मुकाबले में बस मुट्ठी-भर। ये दबे-पाँव ऊपर की ओर सरकते जा रहे हैं – धीरे-धीरे, चुपके-चुपके। ये राजपुताना राइफल्स के सिपाही हैं।

उनसे कोई दस गज ऊपर एक बाँका जवान बड़ी सतर्कता से चला जा रहा है। निश्चय ही वह कम्पनी का नेता है – मेजर पीरूसिंह। वह फूँक-फूँककर कदम रख रहा है। उसके संकेतों पर सारी टुकड़ी कभी रुककर, कभी झुककर आगे बढ़ रही है। पर वे सहसा रुक क्यों गए?
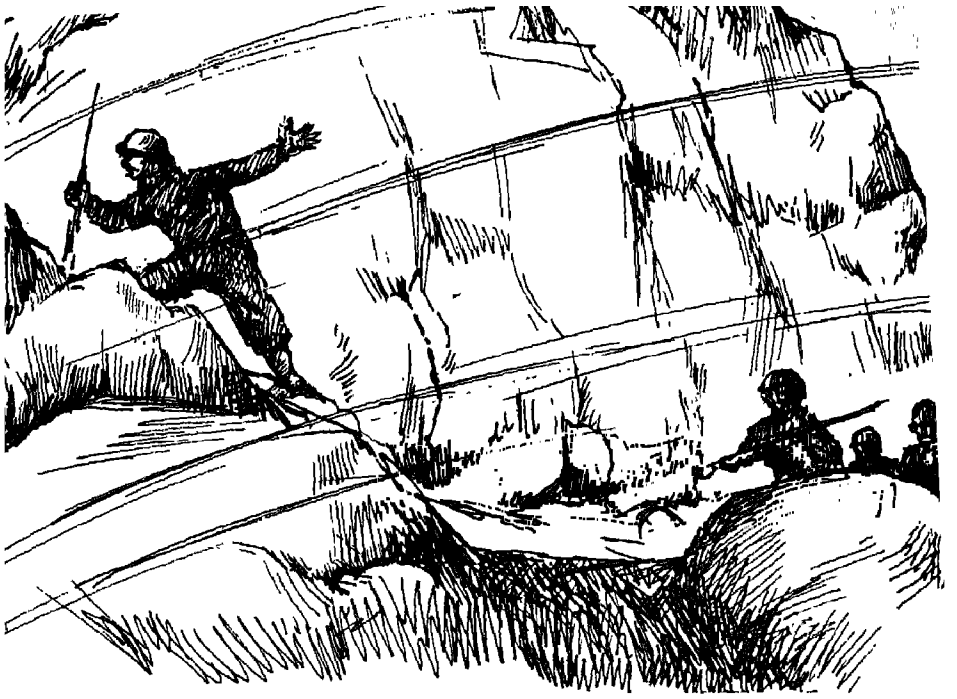
दुश्मन के मोर्चे से टार्च की तेज रोशनी ठीक हमारे सिपाहियों के सामने चमककर घूम गई है। शायद शत्रु को कुछ शक हो गया है। अब टार्च एक से अनेक होकर चमकने लगी हैं, दाएँ-बाएँ, ऊपर-नीचे। एक टार्च की रोशनी ठीक वहीं जाकर जम गई, जहाँ अभी हमारे सिपाही थे। पर अब वे कहाँ हैं ? एक भी तो दिखाई नहीं देता। टार्च व्यर्थ ही कोने-कोने में झाँक रही हैं। हमारे सिपाहियों ने अवश्य ओट ले ली होगी। हो सकता है, किसी कन्दरा में छिप गए हों।

आधी रात बीत चुकी है। प्रभात होने में केवल दो पहर शेष हैं। कुछ काली-काली धूमिल छायाएँ पहाड़ी पर रेंगती-सी दिखाई दे रही हैं। अवश्य वे हमारे सिपाही होंगे। अब वे फिर खुले में निकल आए हैं। आँख-मिचौनी से काम नहीं चलेगा। अब वे खुलकर आगे बढ़ रहे हैं। योजना के अनुसार सबने अपना-अपना स्थान संभाल लिया है। काफी लम्बा-चौड़ा क्षेत्र सैनिकों से भर गया है। वे दो भागों में बँट गए हैं। एक भाग दाईं ओर से ऊपर की ओर लपक रहा है, दूसरा भाग पीरूसिंह के पीछे है और तेजी से आगे बढ़ा जा रहा है।

खट-खट ! धम-धम ! कड़ड़ . . . कड़-कड़ ! शायद शत्रु भी चौकस हो गए हैं ।

"पहाड़ी के ऊपरी भाग पर शत्रु पूरी तरह जाग चुका है ।" एक सरदार ललकारा ।

"वह जल्दी ही यमपुर का अतिथि होगा ।" पीरूसिंह का संक्षिप्त उत्तर है ।

हाँ, तो अब इन्हें विलम्ब नहीं करना चाहिए । आज्ञा की ही तो देरी है। लो, सैनिक आगे बढ़े । उनकी रफ़्तार बड़ी तेज है । पलभर में ही वे लक्ष्य पर पहुँचने वाले हैं । पर नहीं, शत्रु की मशालें धधक उठी हैं । टार्चों और सर्चलाइट के तीखे प्रकाश में हमारे सिपाही पूरी तरह दिखाई दे रहे हैं । ऊपर से गोलियों की बौछार हुई । अब रेंगना व्यर्थ है । वे उठ खड़े हुए ।

"जय हिन्द" का नारा लगाया और हमारे जवान बरसती हुई गोलियों में धस गए । दोनों ओर से गोलियों की बौछार आरम्भ हो गई । मोर्चे की तोपें आग उगलकर हिन्दुस्तानी जवानों का विध्वंस करने लगीं । गोलाबारी की बाढ़ में हमारे सिपाही बार-बार आगे बढ़ने का यत्न कर रहे हैं, परन्तु गोलों की मार आगे नहीं बढ़ने देती । ऊपर से आग बरस रही है, नीचे हमारे जवान लोहे की बाड़ तोड़ रहे हैं । एक को गोली लगती है, वह मर जाता है, दूसरा उसके स्थान पर हथियार पकड़कर कटाकट कँटीले तार काटने लग जाता है । वीर सिपाहियों ने प्राणों की बाजी लगा रखी है । लाशों के ढेर लग गए हैं पर टुकड़ी एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकी । हमारे जवानों की भयंकर क्षति हुई है ।

मुर्गे ने पहली बाँग दे दी । प्रभात होने ही वाला है । पीरूसिंह ने पैंतरा बदल दिया है । अब वह चुने हुए जवानों को साथ लेकर अँधेरे में आगे बढ़ने लगा है । पर मोर्चे पर डटा दुश्मन इधर से भी सावधान है । उसकी नज़रों से ये न बच सके । इधर भी गोलियाँ बरसने लगी हैं, पर ये प्राण हथेली पर रखे ऊपर चढ़े जा रहे हैं । ऊपर से तोपें और नीचे से बंदूकें गरज रही हैं । गोलों के धमाकों से कान के पर्दे फटते हैं, धरती काँपती है ।

आखिर शत्रु की रक्षा-पंक्ति टूट ही गई। हमारे सिपाही मोर्चे के निकट पहुँच गए। अब दोनों ओर के सिपाही एक-दूसरे से भिड़ गए हैं। पीरूसिंह साक्षात् यम के समान लड़ रहा है। वह कबाइलियों पर अकेला ही इस तरह टूट पड़ता है जैसे कबूतरों पर बाज। वह कब निशाना लेता है, और कब दुश्मन को भून देता है — अनुमान लगाना कठिन है। शत्रु के सिपाही भागने की राह देख रहे हैं। पीरूसिंह सिंह की तरह उन पर झपटा। दो-तीन को तो संगीन से ही दबोच लिया। शेर के शिकंजे में आया शिकार कब छूट सकता है?

अब दूध-सा प्रभात निखर आया है। कबाइलियों का मोर्चा हलचल का केन्द्र बन गया है। उनके संकेतों से प्रतीत होता है कि वे शीघ्र ही कोई गहरी चाल चलना चाहते हैं।

पीरूसिंह बेतहाशा मोर्चे की ओर लपका जा रहा है। एक सैनिक ने टोका, "मत जाओ उधर, मेजर साहब। दुश्मन की संख्या बहुत अधिक है। जान का खतरा है।"

"सिपाही को जान की क्या परवाह! मरना तो एक दिन है ही।" पीरूसिंह का एक ही उत्तर है। वह तेजी से ऊपर चढ़ने लगा। साथियों ने रोका, पर वह नहीं रुका। वे भी पीछे हो लिए, पर वे पीरूसिंह का साथ नहीं दे पा रहे हैं। वह भयंकर वेग से ऊपर चढ़ता जा रहा है। पीरूसिंह की गति भी आज बिजली जैसी है।

वह लगातार आगे बढ़ने की कोशिश कर रहा है, मानों किसी ऐसे स्थान पर जा रहा है जहाँ से लौटने की उसकी इच्छा नहीं, आशा भी नहीं। पीछे घूमकर भी नहीं देखा उसने — कोई साथ भी है या नहीं।

धांय। दनदनाती हुई एक गोली आई और मेजर पीरूसिंह के शरीर के आरपार निकल गई। लहू का फव्वारा छूट पड़ा, पर क्या मजाल कि मेजर की चाल रत्तीभर भी धीमी पड़ी हो। उल्टे वह चोट खाए सांप की तरह और भी उग्र हो उठा है और भयंकर वेग से मोर्चे की तरफ बढ़ रहा है। कड़-कड़, कड़-कड़ गोलियाँ बरस रही हैं, बरसने दो . . . . . .

नेता के इस साहस से सिपाहियों के अंग-अंग में बिजली दौड़ गई है। वे भी प्राणों का मोह छोड़कर शत्रु पर छा जाने के लिए उमड़ पड़े हैं। शायद वे अपने मेजर को गोलियों की बौछार से बचा सकें।

पर पीरूसिंह ! वह तो मोर्चे की ओर बढ़ता ही जा रहा है — अकेला, निपट अकेला ! सब पिछड़ गए हैं उससे। जिधर से गोलियों की बौछार आ रही है, ठीक उसी ओर बढ़ता जा रहा है, आज उसे जैसे गोलियों से प्यार हो गया हो। उनकी मार से उसका रोम-रोम छलनी हो गया है। अंग-अंग से लहू के फव्वारे छूट रहे हैं, पर उसे मानो शरीर की चिंता रही ही नहीं। वह तो शत्रु के सिर पर टूट पड़ना चाहता है।

लो, वह अब शिखर पर पहुँच गया है — ठीक यहीं है शत्रु का मोर्चा। कबाइली चारों ओर से निकल आए हैं। दाँतों में जीभ की तरह पीरूसिंह शत्रु-दल में घिर गया है। सोचने का समय नहीं। क्षण भर भी चूका तो दुश्मन की गोलियाँ उसे भून डालेंगी, आग की लपटें निगल जाएँगी।

उफ् ! वह एक खंदक पर कूद पड़ा। उस पर क्या बीतेगी ? जिएगा या मरेगा ? लेकिन यह सोचने की फुरसत किसे है।

पर चूक गया। पाँव निशाने पर नहीं पड़े। खन्दक दो कदम दूर रह गई है। फिर भी वह घबराया नहीं, उल्टे प्रचंड हो उठा है। घावों से छूटती रक्त की पिचकारियों से उसका रूप भयंकर हो गया है – उसके आक्रमण को शत्रु झेल नहीं पा रहा है। मोर्चा टूट चुका है। कबाइली भाग खड़े हुए हैं। पीरूसिंह भगोड़ों के पीछे भाग रहा है। घावों से बहती लहू की धार और भी तेज हो गई है, साथ ही उसकी फुर्ती भी तीव्रतम हो गई। अब दूसरे ठिकाने से भी शत्रु भाग रहा है, तीसरे ठिकाने से भी।

भारतीय सेना के जवान अंतिम विजय के लिए आ रहे हैं, और मेजर पीरूसिंह अपनी अंतिम यात्रा पर जा रहा है।

"जाओ वीर, जाओ ! टीटवाल की पहाड़ी के उस उभरे शिखर से स्वर्ग की सीमा तुम्हारे निकट है, बिल्कुल निकट ! जाओ, दिव्य आत्माएँ तुम्हारे स्वागत में पलकें बिछाए खड़ी हैं।"

धरती का वह स्थान धन्य हो गया, जहाँ मेजर पीरूसिंह ने अपनी आखिरी साँस तक लड़ते-लड़ते प्राण निछावर कर दिए। वह राष्ट्र धन्य हो गया जिसकी गोद में ऐसे वीर पुत्र ने जन्म लिया और उसी की आन के लिए लड़ते-लड़ते चिरनिद्रा में सो गया।

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. "सिपाही की विदाई" से लेखक का क्या अभिप्राय है ?
2. भारतीय सिपाही किस प्रकार आगे बढ़ रहे थे ?

4. "सिपाही को जान की क्या परवाह । मरना तो एक दिन है ही"– इस कथन का क्या आशय है ?

5- पीरूसिंह गोलियाँ लगने के बावजूद शत्रु के मोर्चे की ओर क्यों बढ़ता गया ?

II. दिए गए शब्दों में से उचित शब्द छाँटकर रिक्त स्थानों में भरिए –

काली-काली, जीभ, अन्तिम, पूरी तरह, रक्त रंजित

1- टीटवाल की दक्षिणी पहाड़ी कुछ ही देर बाद -------- हो जाएगी ।

2- कुछ ---------- रेंगती सी छायाएँ पहाड़ी पर दिखाई देने लगी ।

3- तीखे प्रकाश में सिपाही ----------- दिखाई दे रहे थे ।

4- दाँतों में --------- की तरह पीरूसिंह शत्रु दल में घिर गया है ।

5- मेजर पीरूसिंह -------------- यात्रा पर जा रहा है ।

भ्रम का भूत

एक था भोला। पढ़ने-लिखने में बहुत ही होशियार। अक्ल से बहुत तेज़ और स्वभाव से चुस्त। माँ-बाप का आज्ञाकारी पुत्र। जब देखो तब हँसता रहता।

वह मोहल्ले के सारे लड़कों का प्रिय और मित्र था। हमेशा पढ़ने-लिखने में डूबा रहता और हर वर्ष पहले दर्जे में पास होता।

पिछले दिनों भोला के मामाजी घर पर आए थे। वे सभी के लिए कुछ न कुछ लेकर आए थे। भोला के लिए भी वे बहुत-सी पत्र-पत्रिकाएँ लाए थे। भोला उन्हें देखकर खुश हो गया। वह उन्हें एक-एक करके पढ़ने लगा। कभी परियों की कहानी, तो कभी जंगली सूअर के किस्से। कभी भालू नाना की कविता, तो कभी साँप का नेवले से युद्ध। भोला ने एक भूत राजा की कहानी भी पढ़ी। भूत राजा की कहानी भोला को सबसे अच्छी लगी। भोला के दिमाग में भूत राजा चक्कर लगाने लगा। पहले तो भोला भूत राजा की कहानी को याद करके खुश होता। अपने संगी-साथियों को सुनाता रहता। जब वह घर में अकेला होता, तो आइने को सामने रख लेता। भूत राजा की तरह की शक्लें बना-बनाकर बहुत-बहुत खुश होता था। फिर वह गले को भींचकर, आँखों को भी मींचकर भूत राजा की तरह से बोलता था। जोर-जोर से हुर्र-हुर्र की आवाजें निकालता। लेकिन कुछ दिनों के बाद कुछ ऐसा चक्कर पड़ा कि भोला भूत राजा की कहानी से डरने लगा। जब लड़के-लड़कियाँ भोला से मिलते और उससे भूत राजा की

कहानी सुनाने के लिए कहते तो वह टालमटोल कर जाता । जैसे-जैसे वे लोग ज़िद करते, वैसे-वैसे भोला को डर-सा लगने लगता । वह डरकर वहाँ से भागकर अपने घर आ जाता । घर आकर वह अपने पढ़ने के कमरे में बैठ जाता, लेकिन उसे खूब डर लगता । धीरे-धीरे भोला को लगने लगा कि कहीं भूत राजा किसी दिन उसे मिल गया तो ? कभी उसने आकर अचानक उसका हाथ पकड़ लिया तो ? कभी वह सोचता कि किसी दिन भूत उसके ऊपर चढ़ बैठा तो ? इन सब बातों को सोच-सोचकर भोला हमेशा परेशान-सा रहने लगा । अब भोला का मन पढ़ाई में भी न लगता । उसका जी उचाट-उचाट सा रहने लगा ।

वह किसी दूसरे ही लोक में घूमता रहता । अब न तो वह मम्मी के पास बैठता और न पापा के पास । संगी-साथी भी उसने एक-एक कर छोड़ दिए । जो लोग उसे बहुत पसंद थे – जिनके बिना वह कभी अकेला रह ही नहीं सकता था, उन सबसे भी भोला कन्नी काटने लगा और नज़रें बचा-बचाकर निकल जाता । वह चुपचाप अपने कमरे में गुमसुम बैठा रहता ।

भोला के इस आकस्मिक परिवर्तन को देखकर सभी लोग आश्चर्यचकित थे । सभी सोचते कि भोला को अचानक यह क्या हुआ ?

मम्मी पूछती तो भोला कोई जवाब न दे पाता । पापा पूछते तो भोला गर्दन झुका लेता ।

भोला के इस अनहोने व्यवहार से सभी परेशान होने लगे ।

एक दिन अचानक आधी रात को भोला बिस्तर पर से उछल पड़ा और जोर-जोर से हिचकियाँ लेकर रोने लगा । मम्मी-पापा ने पूछा तो भोला रो-रोकर कहने लगा कि उसको भूत पकड़ने आता है । भूत उसको खा जाएगा और वह बचेगा नहीं ।

मम्मी-पापा ने भोला को लाख समझाया पर वह न माना । रात-भर वह इसी प्रकार बकता रहा और फिर सवेरे तक सोया ही नहीं । सवेरे भोला को उसके मम्मी-पापा अस्पताल ले गए । डॉक्टर ने जाँच की तो

किसी बीमारी के निशान नहीं मिले। डॉक्टर भी परेशान हो गया। डॉक्टर ने कहा– "इसे मनोवैज्ञानिक बीमारी है। इसका इलाज किसी मनोचिकित्सक से कराइए।"

मनोचिकित्सक ने भी बहुत प्रयत्न किया, लेकिन भूत राजा भोला के मस्तिष्क में ऐसे बैठ गया था कि निकलता ही नहीं था। हारकर मम्मी-पापा थक गए और रात-दिन इसी चिंता में घुलने लगे।

कुछ दिनों बाद गाँव में एक साधु आए। वे गाँव में पहले भी कई बार आ चुके थे, इसलिए सारे गाँववाले उन्हें अच्छी तरह से जानते थे। उनके आते ही सारे गाँव वालों में प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती थी। साधु के पास भोला के पापा भी जाते थे। इस बार जब साधु के पास भोला के पापा नहीं आए तो उन्होंने गाँववालों से भोला के पापा के बारे में भी पूछा। गाँववालों ने बताया कि उनके बेटे भोला को भूत की बीमारी लगी हुई है, इसलिए वे बेचारे बड़े परेशान रहते हैं। न कहीं आते हैं और न कहीं जाते हैं। घर में ही पड़े-पड़े दुखी होते रहते हैं।

साधु ने कुछ नहीं कहा। अगले दिन उन्होंने भोला के पापा को भी बुलवाया। साधु ने सबसे कहा – "हमें रात को आठ बजे पूजा के लिए पाँच दिन तक दूध चाहिए। यह दूध कोई बड़ा नहीं, बच्चा लेकर आए और वह भी अकेले। दूध देकर वह अपने घर चला जाए।"

सभी लोग इसके लिए तैयार थे। वे अपने-अपने बच्चों का नाम लेने लगे। सिर्फ़ भोला के पापा चुप रहे। जब सभी लोग अपने बच्चों का नाम ले चुके, तो साधु मुस्कराए और बोले – "नहीं ! हमारे लिए सिर्फ़ भोला ही दूध लाएगा।"

गाँव के लोगों ने प्रसन्नता से साधु के इस प्रस्ताव को मंजूर कर लिया। भोला के पापा ने भी इसे मान लिया। शाम को भोला दूध लेकर साधु को पहुँचा आया।

दो दिन तो भोला ठीक तरह से दूध पहुँचा आया। तीसरे दिन जब वह साधु के पास पहुँचा, तो रो रहा था। दूध का बर्तन बिलकुल खाली था।

साधु ने पूछा तो भोला ने कहा – "रास्ते में भूत ने मुझे घेर लिया और लाख मना करने के बाद भी वह दूध पी गया।" यह कहकर भोला फिर रोने लगा।

साधु ने प्रेम से उसके सिर पर हाथ फेरा और कहा – "क्या हम तुम्हारे भूत को ज़िन्दगी भर के लिए भगा दें ?

भोला यह सुनकर प्रसन्न हो गया और साधु के पैर छूकर बोला – "आप भूत को भगा दीजिए न !"

साधु ने तरकीब बताते हुए कहा – "देखो बेटा ! कल जब तुम दूध देने आओ तो अपनी दोनों हथेलियों को तवे से अच्छी तरह काला कर लेना – खूब काला। रास्ते में भूत तुम्हें मिले तो कहना – "दूध नहीं दूँगा, चाहे कुश्ती लड़ लो।" और जब भूत कुश्ती लड़े तो अपने दोनों हाथों को उसके मुँह पर अच्छी तरह मल देना।" बस, फिर भूत कभी नहीं आएगा।

यह तरकीब बताकर साधु ने भोला को विदा किया। भोला ने अगले दिन ऐसा ही किया। उसने अपने दोनों हाथों को तवे से खूब काला कर लिया और सीना फुलाते हुए चला साधु को दूध देने के लिए।

चलते-चलते रास्ते में भोला को फिर भूत मिल गया। उसने दूध माँगा पर भोला ने साफ मना कर दिया और उसे कुश्ती के लिए ललकारने लगा। दोनों में गुत्थमगुत्था हो गई। भोला तो तैयार था ही, उसने भूत के मुँह पर अपने दोनों हाथ खूब रगड़े। भूत भाग गया। भोला जीत गया और दूध लेकर हँसता-मुस्कराता साधु के पास आ गया।

साधु ने भोला को देखा तो हँसने लगे। फिर प्रेम से बोले – "आओ बेटे ! अब तुम्हें कभी भूत नहीं मिलेगा।"

यह कहकर साधु कुटिया से अपना शीशा ले आए और भोला के सामने रख दिया। भोला ने आइने में अपना मुँह देखा, तो भौचक्का रह गया। उसका तो सारा मुँह काला था।

साधु हँस रहे थे और भोला शर्म से गड़ा जा रहा था। अंत में साधु बोले – "बेटा, देख लिया भूत ! अब तुम समझ गए होगे कि भूत कहीं

भी नहीं होते हैं, सिर्फ़ भ्रम होता है, और वही भ्रम भूत बन जाता है ।"

भोला उस दिन के बाद बिलकुल ठीक हो गया ।

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. प्रारंभ में भोला का स्वभाव कैसा था ?
2. भोला के स्वभाव में अचानक आए परिवर्तन का क्या कारण था?
3. भोला के माता- पिता रात- दिन चिंता में क्यों घुलने लगे ?
4. हमारे लिए सिर्फ भोला ही दूध लाएगा – साधु के इस कथन के पीछे क्या उद्देश्य था ?
5. साधु ने भोला के भूत से लड़ने की क्या तरकीब बताई ?
6. भोला के अपने ही मुँह काला होने का क्या भेद है ?

II. सूची "क" के कथनों को सूची "ख" के कथनों से मिलाइए –

(क)	(ख)
1. हमेशा पढ़ने लिखने में डूबा रहता	कि भोला भूत राजा की कहानी से डरने लगा ।
2. जब वह घर में अकेला होता	उन सबसे भी वह कन्नी काटने लगा ।

3.	कुछ दिनों बाद कुछ ऐसा चक्कर पड़ा	तो आइने को सामने रख लेता।
4.	जिनके बिना भोला कभी अकेला रह ही नहीं सकता था	सिर्फ भ्रम होता है।
5.	भूतराजा भोला के मस्तिष्क में ऐसे बैठ गया था	और हर वर्ष पहले दर्जे में पास होता।
6.	भूत कहीं भी नहीं होते	कि निकलता ही नहीं था।

माँ

मास्टर हमीद दिल्ली के एक मदरसे में पढ़ाते थे। उनका घर मुर्शिदाबाद में था। उनके बाप बढ़ई का काम करते थे। हमीद की तालीम पहले तो मोहल्ले की मस्जिद में हुई। फिर बाप ने तहसील के मदरसे में दाख़िल करा दिया। हमीद उर्दू मिडिल का इम्तहान देने वाला था कि बस्ती में प्लेग की महामारी फैली। इस महामारी में हमीद के बाप भी चल बसे। हमीद की माँ के पास कफ़न-दफ़न के बाद कुल सत्ताईस रुपए बचे। हमीद मिडिल के इम्तहान में पास हो गया। अब उसे अंग्रेजी पढ़ने का शौक़ हुआ। जब उसने सोचा कि किस शहर में जाकर अंग्रेजी पढ़ूँ तो बस एक दिल्ली का ख्याल मन में आया। शायद इसलिए कि बचपन में कहानियों में दिल्ली शहर का जिक्र सुना था। माँ से पन्द्रह रुपए लिए और दिल्ली पहुँचा। शहर में घंटों घूमने के बाद गली क़ासिम जान में अपने पड़ोसी नसरुल्लाह खाँ कांस्टेबल के घर पहुँचा। नसरुल्लाह खाँ ने, जो हमीद के बाप को अच्छी तरह जानते थे, हमीद की बड़ी खातिर की और अपने छोटे-से मकान के दरवाजे में उसके लिए एक छोटा सा खटोला डाल दिया। हमीद अब यहीं रहने लगा। एक मदरसे में नाम भी लिख गया और तीन साल में वह दसवें दर्जे तक पहुँच गया। इस ज़माने में हमीद ने अपनी ज़मात के एक लड़के को, जो हिसाब में कमज़ोर था, हिसाब पढ़ाना शुरू कर दिया। उस लड़के का बाप हमीद को सात रुपया महीना दिया करता था। हमीद ने नसरुल्लाह खाँ से कहा कि अब मेरे पास दाम हैं। आप

इजाजत दें तो मैं भटियारे के यहाँ से रोटी खा लिया करूँ। नसरुल्लाह खाँ ने कुछ इस तरह से कहा – "साहबज़ादे, कुछ बेवकूफ़ हुए हो।" हमीद की फिर हिम्मत न पड़ी कि कुछ कहे। मदरसे में सर्दियों की छुट्टी ली। नसरुल्लाह खाँ ने भी छुट्टी ली और मुर्शिदाबाद जाने का इरादा किया तो हमीद को साथ लेते गए।

उस ज़माने में हमीद की माँ के पास बस अपने शौहर के वक्त के बारह रुपए थे और आँगन में कटहल का पेड़, जो हर साल पच्चीस-तीस रुपए में बिक जाता था। मगर जब हमीद घर पहुँचा तो माँ ने एक रिश्तेदार के यहाँ उसकी शादी का सारा बंदोबस्त कर रखा था। शादी जैसे-तैसे हो गयी। शादी के सातवें रोज़ हमीद दिल्ली वापस चला आया यहाँ आकर इम्तहान की तैयारी में लग गया। मार्च में इम्तहान हुआ और वह दूसरे दर्जे में पास हो गया। अब नौकरी की फिक्र हुई। बहुत दिन इधर-उधर मारे- मारे फिरने के बाद एक मदरसे में काम करने का मौका मिला।

हमीद को अब बीस रुपए महीना मिलते थे। उसने फिर हिम्मत करके नसरुल्लाह खाँ से कहा – "चाचा, अगर इजाजत दें तो में अलग कोई कोठरी ले लूँ। "नसरुल्लाह खाँ ने कहा – "अच्छा मियाँ, तुम्हारी यही राय है तो ले लो।" और कुछ देर के बाद बोले – "मैं खुद तुम्हें सस्ता-सा मकान ढूँढ दूँगा।" हमीद खुद सोच रहा था कि अब अपनी बीवी को जाकर ले आए। तीन रुपए महावार का एक छोटा-सा बे-आँगन का घर मिलते ही वह तीन दिन की छुट्टी लेकर घर गया और अपनी बीवी को साथ ले आया। ग़रीब माँ फिर अकेली रह गयी।

बीवी को दिल्ली आये सात बरस हो गए। इस ज़माने में हमीद के यहाँ तीन लड़के हुए और एक लड़की, जिनमें से एक लड़का और एक लड़की मर गए। उधर मदरसे में भी काम बढ़ता गया। तनख्वाह अब उसकी तीस रुपए थी। और दस रुपए महीने पर एक लड़के को उसके घर पर भी पढ़ाया करता था। मगर दिल्ली का खर्च, बाल-बच्चों का साथ। ग़रीब

हमीद के पास बचता-बचाता कुछ नहीं था। इसलिए माँ के ख़त पर ख़त आते, ख़ुद भी उसका जी बहुत चाहता था, मगर जाने की नौबत न आती थी।

मास्टर हमीद सुबह मोहल्ले की मस्जिद में नमाज़ पढ़ते। और तब फिर कोई काम करते। नमाज़ पढ़कर लौटते तो एक सत्तर बरस की सफ़ेद बालों और झुकी कमर वाली धोबिन "जुनकिया" रास्ते में अपनी लादी लिये घाट को जाती मिलती। न जाने क्या बात हुई कि सात-आठ दिन से जुनकिया न मिली। कोई ऐसी बात न थी, मगर आठवें दिन जब मास्टर हमीद सुबह-सुबह मदरसे जाने के लिए निकले तो उनसे रहा नहीं गया। उन्होंने पास वाले घर की ड्योढ़ी में कदम रखा और एक लड़के से, जो सामने था, पूछा — "अमाँ लड़के, जुनकिया धोबिन का क्या हाल है ?" लड़के ने कहा — "जुनकिया तो कल रात को एक बजे मर गयी। उसकी बिरादरी वाले कल जमुना पर उसे फूँक भी आए।"

मास्टर हमीद का बेचारी जुनकिया से क्या वास्ता। मगर यह खबर सुनकर उनका कलेजा धक्क से हो गया। रास्ते-भर सिर झुकाये न जाने क्या सोचते रहे। मदरसे पहुँचे तो उदास-उदास। साथियों ने पूछा भी — "कहिए मिज़ाज कैसा है ?" यह कहकर कि कोई बात नहीं, टाल दिया। घर आये तो भी सुस्त-सुस्त। बीवी ने पूछा तो उसे भी कुछ न बताया, मगर तीसरे रोज़ बकरीद की छुट्टी होने वाली थी। हमीद ने दो दिन की छुट्टी की दरख्वास्त और दी और ऐन बकरीद के दिन मुर्शिदाबाद का टिकट ले रेल में सवार हो गया। ईद का दिन रेल में कटा। न नमाज, न कुरबानी। मगर दिन-भर उस सफ़ेद सिर का ध्यान लगा रहा, जिसने बरसों सोते वक्त, उसके बिस्तर पर झुककर दुआएँ दी थीं, उस गोद का, जिसमें बरसों उसने आराम किया था, उस चेहरे का, जिसे देखकर उसकी सारी परेशानियां दूर हो जाती थीं, और जिसे अब कोई सात बरस से न देखा था।

हमीद कोई बुरा बेटा न था। कोई यह भी न समझे कि माँ की मुहब्बत

उसके दिल में न थी या जोरू-बच्चों में पड़कर यह अपनी माँ को भूल गया था। वह साल में तीन-चार मर्तबा अपनी माँ को चार-चार, पाँच-पाँच रुपए मनीआर्डर भेज देता था और यह रकम इस ग़रीब बाल-बच्चों वाले मुदर्रिस के लिए बहुत थी। मगर माँ को खत लिखता था तो बच्चों के हाथ में कलम देकर खत पर कुछ-न-कुछ निशान दादी के लिए करा देता था। उसकी बीवी ने भी कुछ लिखना-पढ़ना सीख लिया था। वह भी बराबर अपने हाथ से खत में सलाम लिखती थी। माँ का ख़त भी तकरीबन हर महीने आ जाता था। उसमें बस्ती की, इधर-उधर की खबरें होतीं और हमेशा यह सवाल कि बेटा घर कब आएगा। माँ यह ख़त नवासी दर्जिन से लिखवाया करती थी। उसकी लिखाई ऐसी कीड़े-मकड़ों की-सी होती कि ख़त का बहुत-सा हिस्सा मुश्किल से पढ़ा जाता। मगर यह सवाल हमेशा बहुत साफ़- साफ़ कार्ड पर लिखा होता था। इसका जवाब हमीद भी हर बार यही लिख देता — "इंशा अल्लाह आमों के मौसम में।" मगर हर साल आमों का मौसम गुज़र जाता था और माँ को बेटे की शक्ल देखनी न नसीब होती थी। हमीद चाहता था कि सारे कुनबे को साथ लेकर जाए। फिर इतने दिन से नौकर था, माँ के लिए और दूसरे सगे-संबंधियों और पड़ोसियों के लिए देहली के तोहफे भी ले जाए और सबके लिए कभी दाम न हो पाए। सात बरस इरादे-ही-इरादे में कट गए। मगर जुनकिया की मौत की ख़बर ने न जाने हमीद के दिल पर क्या असर किया कि यह अकेला ही चल खड़ा हुआ।

हाँ तो बकरीद के दिन सूरज डूबने से कोई घंटा-भर पहले मास्टर हमीद मुर्शिदाबाद पहुँचे। खूब ज़ोर की बारिश हो रही थी। मास्टर साहब के पास बस एक छतरी थी, कुछ और सामान तो साथ था नहीं। छतरी लगा यों ही सीधे घर गए। घर का दरवाजा बंद था। उन्होंने जंजीर खटखटाई। कोई न बोला। फिर ज़ोर से खटखटाई। किसी ने जवाब न दिया। छतरी नीचे रखकर दोनों हाथों से दरवाज़ा खूब ठोका और दो-एक दफ़ा बेसाख्ता जोर से "अम्माँ-अम्माँ" भी मास्टर हमीद के मुँह से निकल

गया तो एक कोठरी के अन्दर से किसी ने बैठी हुई आवाज में जवाब दिया– "यह कौन है अम्माँ वाला ? यहाँ किसी की अम्माँ नहीं रहती।" मास्टर साहब बोले – "अरे भाई हमीद की माँ का घर यही तो है न?" तो एक छोटा-सा आदमी दरवाज़े पर आया। यह ऐवज़ क़साई का बेटा लच्छू था। उसने कोई चार बरस हुए, हमीद की माँ से यह मकान ख़रीद लिया था। उसने बस एक-दो जुम्लों में यह सब कहानी हमीद से कह दी और बताया कि तुम्हारी माँ अब नवासी दर्जिन का जो घर कोने में है उसमें रहती है।

लच्छू ने यह कहकर दरवाज़ा बंद कर लिया। लेकिन मास्टर हमीद के एक-दो मिनट तक तो कदम ही न उठे। ऐसा मालूम हुआ कि किसी ने दिल में तीर मारा और काम तमाम कर दिया। मकान बिक गया ? और मुझे ख़बर तक न हुई ? या अल्लाह, माँ पर इतनी तंगी थी ? मैं तो समझा था कुछ अब्बा ने छोड़ा था, कुछ मैं भेज देता था, कुछ आमदनी कटहल के पेड़ से हो जाती होगी और काम चलता होगा। मगर यह तो अपनी झोंपड़ी भी पराए हाथों बिक गयी। यही सोचते-सोचते जब सिर उठाया तो नवासी दर्जिन के मकान के सामने पहुँच गया था। उसने जंजीर हिलाने के लिए हाथ उठाया तो ऐसा मालूम हुआ कि हाथ भारी पड़ गया है। खैर जंजीर खटखटाई। नवासी, जो वहीं पास बैठी कुछ सोच रही थी, दरवाज़े पर आयी और हमीद को पहचान गयी। उसने न कुछ कहा न सुना, चिल्लाती हुई सीधी अन्दर गयी – "हमीद की माँ, हमीद की माँ, हमीद आ गया।"

हमीद की माँ से कोई साल-भर से उठा-बैठा भी मुश्किल से जाता था। मगर यह ख़बर सुनकर न जाने कहाँ की ताकत आ गयी कि झट चारपाई से कूदकर दरवाज़े की ओर दौड़ी, हमीद को लिपटा लिया और रोने लगी। हमीद की माँ के बदन में बस हड्डियाँ-ही-हड्डियाँ रह गयी थीं। न जाने कमज़ोरी से, न जाने मुहब्बत की ज़्यादती से, सारे बदन में कँपकँपी थी। कई मिनट तक यह हाल रहा, न माँ ने कुछ कहा न बेटे ने। आखिर इस

चुप्पी को माँ ने ही तोड़ा और कहा – "बेटा काले कोसी से आया है-पानी में शराबोर। ज़रा बैठ जा तो चाय बना लाऊँ।" हमीद की ज़बान से इसके जवाब में यह निकला – "अम्माँ, तुमने घर बेच डाला, मुझे ख़बर तो की होती।" अम्माँ ने कहा – "बेटा, ख़बर करने से क्या फायदा होता? तुझे और फिक्र क्या कम हैं ? और यह बेचारी नवासी, अल्लाह भला करे, बहुत ख्याल करती है, मुझे किसी तरह की तकलीफ़ नहीं। बेटा, तू आ गया, मेरी तो जिंदगी हो गयी।"

हमीद ने अब ज़रा नज़र उठाकर मकान को देखा तो सामने एक छोटी-सी कोठरी थी। हमीद ने माँ से पूछा – "अम्माँ, क्या तुम यहीं सोती हो ?

माँ ने कहा – "नहीं बेटा, मैं उधर की दूसरी कोठरी में रहती हूँ। यहाँ तो नवासी सोती है, जो तुम्हें ख़त लिखा करती है।"

"अम्माँ, क्या तुम अब भी कुछ काम करती हो ? अब तो तुम्हारे हाथ थक जाते होंगे।"

"नहीं बेटा, हाथ तो अभी तक काम देते हैं। मगर कोई डेढ़ साल से आँखें बेकार हैं, निगाह नहीं जमती।"

हमीद चिल्लाया – "आँखें ? अम्माँ, तो क्या तुम मुझे भी नहीं देख सकतीं ?"

माँ ने हमीद के सिर पर हाथ फेरा, फिर गालों पर, उसके सिर को छाती से लगाया। मुँह पर कुछ मुस्कराहट-सी आयी और कहा – "बेटा, तुझे तो देख सकती हूँ, अल्लाह का शुक्र है। सूरज निकलता है, उसे भी देख सकती हूँ, घर भी देख लेती हूँ, मगर और कुछ दिखायी नहीं देता। हाँ, बेटा, तेरा सबसे छोटा नन्हा अब कितने दिनों का हुआ ?"

"अम्माँ, तुम्हारी दुआ से अब डेढ़ बरस का है।" अच्छा तो वह कुरता-टोपी उसके बिलकुल ठीक होगा।" यह कहकर माँ ने एक मैली-सी गठरी खोली और उसमें से टटोलकर एक रेशमी कुरता निकाला और एक लाल खूबसूरत गोल टोपी, जिस पर सच्ची किनारी टँकी हुई थी। "अम्माँ,

क्या यह तुमने नन्हे मजीद के लिए सिया है ?" हमीद ने पूछा और आँखें ज़रा नम हो गयी थीं, हाथ से उन्हें पोंछा।

"नहीं बेटा ! मां ने कहा – यह सिए तो थे मैंने तेरी सलमा के लिए, मगर तुम आए ही नहीं और वह बेचारी चल बसी।" सारी बातचीत में शिकायत का यही एक लफ़्ज था और बस। हमीद माँ की चारपाई पर बैठ गया और न जाने किन ख़यालों में गुम हो गया। कोई आठ बजे हमीद की माँ ने आकर उसके कँधे पर हाथ रखा और कहा – "बेटा, आज तो तू मेरे साथ रोटी खाएगा।"

हमीद, जो सो गया था, चौक पड़ा और बोला – "अम्माँ, और नहीं तो क्या ?" खाना देखकर हमीद हैरत में रह गया। कबाब थे, कलेजी थी, पराठे थे, अंडे थे, माश की दाल थी, मऊ का सिरका था, आम की चटनी थी, एक प्याले में दूध था, एक तश्तरी में मलाई और एक रक़ाबी में कटे हुए कलमी आम। हमीद हैरत में था कि इस गरीबी में यह सब सामान कहाँ से आया। यह सोचता जाता और निवाला मुँह में देता जाता, मगर मुँह में निवाला पहुँचकर ऐसा मालूम होता कि निवाला कुछ बढ़ गया है और मुँह चलाने में दिक़्क़त होती है।

खाना खाकर फिर हमीद माँ की चारपाई पर बैठ गया। हमीद की माँ ने करीब आकर और सिर पर हाथ रखकर कहा – "बेटा, बुरा न मानो तो एक बात कहूँ।"

हमीद का मुँह पीला पड़ गया। उसे ख़्याल हुआ कि शायद माँ यह कहेगी – "मुझे इस पराए घर से निकालकर अपने साथ ले चल या कोई दूसरा घर ले दे।"

हमीद ने कहा – "अम्माँ, जरूर कहो।"

माँ ने कहा – "बेटा, तू शहर का रहने वाला है। मदरसे में नौकर है। मैं पराए घर पड़ी हूँ, तेरी क्या खातिर करूँ। नसीबन को भेजकर खाँ साहब की कोठी में तेरे लिए एक कमरा साफ़ करा दिया है और खाट डलवा दी है, मगर जी चाहता है कि तू मेरे साथ रहता। कहते हुए डरती

हूँ। क्या तू मेरा यह अरमान पूरा कर सकता है ? मैंने इसी उम्मीद पर नसीबन के यहाँ से यह चारपाई भी मँगा ली है।" माँ की यह बात सुनकर हमीद का जी भर आया। मुँह से आवाज़ न निकली। घबराहट में इधर-उधर देखा और बोला – "अम्माँ, यह भी कोई बात है। मैं तुम्हारे पास न रहूँगा तो कहाँ जाऊँगा।" माँ ने हमीद के माथे को चूमा और झट नसीबन से वह चारपाई अपनी कोठरी में डलवा दी। फिर एक गठरी खोली। उसमें से एक सफ़ेद चादर निकाली, जिस पर बड़ी खूबसूरत बेल लगी थी। दो तकिए निकाले, साफ़-साफ़ गिलाफ़, चारों तरफ़ झालर। ओढ़ने के लिए बारीक चादर। तकियों पर कोई अच्छा-सा इत्र मला। फिर बेटे की तरफ़ बढ़ी और कहा – "बेटा, अब तुम सो जाओ। बहुत थक गए होगे।"

हमीद यह सब तमाशा देख रहा था और हैरत में था कि अल्लाह यह सब कहाँ से आया। आख़िर न रहा गया और उसने पूछ ही लिया "अम्मा, यह खाना और यह सारा सामान कहाँ से आया ?"

अम्माँ बोली – "बेटा, अब यह गाँव भी शहर ही है। अल्लाह रखे सब चीज़ मिलती है, और खाना, सो आज तो बकरीद का दिन था। गोश्त पड़ोसियों के घर से आया था, और चीजें भी इधर-उधर से कर लीं।"

"मगर अम्माँ, यह चादर, यह गिलाफ़, ये जूतियाँ, यह सारा सामान, इत्र, मुरादाबादी उग़लदान, इसके लिए रुपया कहाँ से आया ?

माँ की अंधी आँखों से पानी की दो-चार बूँदें टपकीं और उसने ऐसी आवाज़ में, जिसमें न जाने मलामत का ज्यादा असर था या मुहब्बत का, कहा – "बेटा तू , और यह पूछता है। एक-एक दिन तेरे ही इन्तजार में कटा है। सात बरस में यह तैयारी कर पायी हूँ। बेटा, सात बरस में।"

माँ की इस बात को सुनकर कोठरी में खामोशी छा गई। फिर रात-भर किसी ने किसी से कुछ बात न की।

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. नसरुल्लाह खाँ ने बेसहारा हमीद की कैसे मदद की ?
2. मास्टर हमीद चाहते हुए भी अपनी माँ के पास क्यों नहीं जा सका ?
3. जुनकिया धोबिन की मृत्यु की खबर सुनते ही मास्टर हमीद अकेला मुर्शिदाबाद क्यों चल पड़ा ?
4. मुर्शिदाबाद पहुँचते ही मास्टर हमीद को अपने घर की हालत में क्या फ़र्क दिखलाई पड़ा ?
5. इस कहानी के आधार पर माँ और बेटे की भावनाओं के अन्तर को स्पष्ट कीजिए ?

II. मास्टर हमीद की गरीब बुड्ढ़ी माँ ने अपने बेटे हमीद के स्वागत के लिए कीमती सामान क्यों जुटाया ? नीचे लिखे कारणों में से सही कारण पर चिह्न लगाइये ।

1. बेटे के प्रति ममता के कारण
2. बेटे को प्रभावित करने के लिए
3. पड़ोसियों को दिखाने के लिए

छोटा जादूगर

कार्निवल के मैदान में बिजली जगमगा रही थी। हँसी और विनोद की आवाज गूँज रही थी। उस छोटे फुहारे के पास मैं खड़ा था, जहाँ एक लड़का चुपचाप शरबत पीनेवालों को देख रहा था। उसके गले में फटे कुरते के ऊपर से एक मोटी-सी सूत की रस्सी पड़ी थी और जेब में कुछ ताश के पत्ते थे। उसके मुँह पर गंभीर विषाद के साथ धैर्य की रेखा थी। मैं उसकी ओर न जाने क्यों आकर्षित हुआ। मैने पूछा – "क्यों जी तुमने इस मेले में क्या देखा ?"

"मैंने सब देखा है। यहाँ चूड़ी फेंकते हैं। खिलौनों पर निशाना लगाते हैं। तीर से नम्बर छेदते हैं। मुझे तो खिलौनों पर निशाना लगाना अच्छा मालूम हुआ। जादूगर तो बिलकुल निकम्मा है। उससे अच्छा तो ताश का खेल मैं ही दिखा सकता हूँ।" उसने बड़े गर्व से कहा। उसकी वाणी में कहीं रुकावट न थी।

मैंने पूछा – "और उस परदे में क्या है ? वहाँ तुम गए थे ?"

"नहीं, वहाँ मैं नहीं जा सका, टिकट लगता।"

मैंने कहा – "तो चलो, मैं वहाँ पर तुमको ले चलूँ।

उसने कहा – "वहाँ जाकर क्या कीजिएगा ? चलिए निशाना लगाया जाए।"

मैंने उससे सहमत होकर कहा – "तो फिर चलो पहले शरबत पी लिया जाए। उसने सिर हिलाकर हामी भर दी।

राह में मैंने उससे पूछा – "तुम्हारे और कौन हैं ?"

"माँ और बाबूजी।"

"उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया ?"

"बाबूजी जेल में हैं।

"क्यों ?"

"देश के लिए।" वह गर्व से बोला।

"और तुम्हारी माँ ?"

"वह बीमार है।

"और तुम तमाशा देख रहे हो ?"

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा –

"तमाशा देखने नहीं दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को भोजन दूँगा। शरबत न पिलाकर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती।

मैं आश्चर्य से उस तेरह-चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा।

"जब कुछ लोग खेल- तमाशा देखते ही हैं, तो क्यों न दिखाकर माँ की दवा करूँ और अपना पेट भरूँ।"

मैंने एक लम्बी सांस ली। चारों ओर बिजली के लट्टू नाच रहे थे। मन व्यग्र हो उठा। मैंने उससे कहा – "अच्छा चलो, निशाना लगाया जाए।

हम दोनों उस जगह पर पहुँचे, जहाँ खिलौनों को गेंद से गिराया जाता था। मैंने बारह टिकट खरीदकर उस लड़के को दिए।

वह निकला पक्का निशानेबाज। उसकी कोई गेंद खाली नहीं गई। देखने वाले दंग रह गए। उसने बारह खिलौनों को बटोर लिया।

लड़के ने कहा – "बाबूजी, आपको तमाशा दिखाऊँगा। बाहर आइए। मैं चलता हूँ।" वह नौ-दो ग्यारह हो गया। मैंने मन-ही-मन कहा – इतनी जल्दी आँख बदल गई।

मैं घूमकर पान की दुकान पर आ गया। पान खाकर बड़ी देर तक

इधर-उधर टहलता देखता रहा। झूले के पास लोगों का ऊपर-नीचे आना देखने लगा। अकस्मात् किसी ने ऊपर के हिंडौले से पुकारा – "बाबूजी।"

मैंने पूछा – "कौन ?"

"मैं हूँ छोटा जादूगर।"

कलकत्ता के सुंदर बोटनिकल उद्यान में लाल कमलिनी से भरी हुई एक छोटी-सी झील के किनारे अपनी मंडली के साथ बैठा हुआ मैं जलपान कर रहा था। बातें हो रही थीं। इतने में वही छोटा जादूगर दिखाई पड़ा। हाथ में चारखाने की खादी का झोला। साफ जाँघिया। और आधी बाहों का कुरता। सिर पर एक रुमाल सूत की रस्सी से बँधा हुआ था। वह मस्तानी चाल से झूमता हुआ आया और कहने लगा –

"बाबूजी नमस्ते। कहिए तो आज भी खेल दिखाऊँ ?"

"नहीं जी, अभी हम लोग जलपान कर रहे हैं।"

"फिर इसके बाद क्या गाना-बजाना होगा, बाबूजी ?"

"नहीं जी – तुमको . . . . क्रोध से कुछ और कहने जा रहा था। श्रीमती ने कहा – "दिखालाओ जी, तुम तो अच्छे आए। भला कुछ मन तो बहले।" कि मैं चुप हो गया। श्रीमती जी की वाणी में माँ की-सी मिठास थी, जिसके सामने किसी भी लड़के को रोका नहीं जा सकता। उसने खेल आरम्भ किया।

उस दिन मेले में जीते सब खिलौने उसके खेल में अपना अभिनय करने लगे। भालू मनाने लगा। बिल्ली रूठने लगी। बन्दर घुड़घुड़ाने लगा।

गुड़िया का ब्याह हुआ। गुड्डा वर काना निकला। लड़के की वाचालता से ही अभिनय हो रहा था। सब हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए।

मैं सोच रहा था कि आवश्यकता ने बालक को कितनी जल्दी चतुर बना दिया है। यही तो संसार है।

ताश के सब पत्ते लाल हो गए। फिर सब काले हो गए। गले की सूत की डोरी टुकड़े- टुकड़े होकर फिर जुड़ गई। लट्टू अपने आप नाच रहे थे।

मैंने कहा – "अब हो चुका। अपना खेल बटोर लो, हम लोग भी अब जाएँगे।"

श्रीमतीजी ने धीरे से उसे एक रुपया दे दिया। वह उछल उठा।

मैंने कहा – "लड़के ! "

"छोटा जादूगर कहिए। यही मेरा नाम है। इसी से मेरी जीविका है।" मैं कुछ बोलना ही चाहता था कि श्रीमतीजी ने कहा – "अच्छा तुम इस रुपए से क्या करोगे ?"

"पहले भरपेट पकौड़ी खाऊँगा। फिर एक सूती कम्बल लूँगा।"

मेरा क्रोध अब लौट आया। मैं अपने पर बहुत क्रुद्ध होकर सोचने लगा– "ओह ! कितना स्वार्थी हूँ मैं। उसके एक रुपया पाने पर मैं ईर्ष्या करने लगा था।"

वह नमस्कार करके चला गया। हम लोग धीरे-धीरे मोटर से हावड़ा की ओर चल पड़े।

रह-रहकर छोटे जादूगर की याद आती थी। अचानक एक झोंपड़ी के पास वह कन्धे पर कंबल डाले दिखाई दिया। मैंने मोटर रोककर उससे पूछा– "तुम यहाँ कहाँ ?"

"मेरी माँ यहीं है न। अब उसे अस्पतालवालों ने निकाल दिया है।" मैं उतर गया। उस झोंपड़ी में देखा, तो एक स्त्री चिथड़ों से लदी हुई काँप रही थी।

छोटे जादूगर ने कम्बल ऊपर से डालकर उसके शरीर से चिमटते हुए कहा – "माँ।"

मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े।

बड़े दिन की छुट्टी बीत चली थी। मुझे अपने आफिस में समय से पहुँचना था। कलकत्ता से मन ऊब गया था। फिर भी चलते-चलते एक बार उस उद्यान को देखने की इच्छा हुई। साथ-ही-साथ जादूगर भी दिखाई पड़ जाता, तो और भी . . . . मैं उस दिन अकेले ही चल पडा। जल्दी लौट आना था।

दस बज चुके थे। मैंने देखा कि उस निर्मल धूप में सड़क के किनारे एक कपड़े पर छोटे जादूगर का रंगमंच सजा था। मोटर रोककर उतर पड़ा। वहाँ बिल्ली रूठ रही थी। भालू मनाने चला था। ब्याह की तैयारी थी। यह सब होते हुए भी जादूगर की वाणी में वह प्रसन्नता की तरी नहीं थी। जब वह औरों को हँसाने की चेष्टा कर रहा था, तब जैसे स्वयं काँप जाता था। मानों उसके रोएँ रो रहे थे। मैं आश्चर्य से देख रहा था। खेल हो जाने पर पैसा बटोरकर उसने भीड़ में मुझे देखा। वह जैसे क्षण भर के लिए स्फूर्तिमान हो गया। मैंने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा – "आज तुम्हारा खेल जमा क्यों नहीं ?"

"माँ ने कहा कि आज तुरन्त चले आना। मेरी घड़ी समीप है।" अविचल भाव से उसने कहा।

"तब भी तुम खेल दिखाने चले आए।" मैंने कुछ क्रोध से कहा। उसके मुँह पर वही परिचित तिरस्कार की रेखा फूट पड़ी। उसने कहा– "क्यों न आता।"

और कुछ अधिक कहने में जैसे वह अपमान का अनुभव कर रहा था।

क्षण भर में मुझे अपनी भूल मालूम हो गई। उसके झोले को गाड़ी में फेंककर उसे भी बिठाते हुए मैंने कहा – "जल्दी चलो।" मोटर वाला मेरे बताए हुए पथ पर चल पड़ा।

कुछ ही मिनटों में मैं झोंपड़े के पास पहुँचा। जादूगर दौड़कर झोंपड़े में माँ- माँ पुकारते हुए घुसा। मैं भी पीछे था, किन्तु स्त्री के मुँह से "बे...." निकलकर रह गया। उसके दुर्बल हाथ उठकर गिर गए। जादूगर उससे लिपटा रो रहा था। मैं स्तब्ध था। उस उज्ज्वल धूप में सारा संसार जैसे जादू-सा मेरे चारों ओर नृत्य करने लगा।

– जयशंकर प्रसाद

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. छोटे लड़के ने मेले में क्या-क्या देखा ?
2. छोटा लड़का खेल तमाशा क्यों दिखाना चाहता था ?
3. अंतिम बार खेल दिखाते समय छोटे जादूगर का खेल जमा क्यों नहीं ?
4. छोटे जादूगर के झोंपड़े पर पहुँच कर लेखक ने क्या देखा ?
5. माँ के बहुत बीमार होने पर भी छोटा जादूगर खेल दिखाने क्यों गया ?

II. नीचे दिए गए शब्दों में से उचित शब्द चुनकर वाक्य पूरे कीजिए –

थपथपाते, लोट-पोट, टुकड़े-टुकड़े, चलते-चलते, धीरे-धीरे

1. हम लोग मोटर से ---------------- हावड़ा को चल पड़े।
2. ---------------- इस उद्यान को देखने की इच्छा हुई।
3. सब हँसते-हँसते ---------------- हो गए।
4. सूत की डोरी ---------------- होकर जुड़ गई।
5. मैंने उसकी पीठ ---------------- हुए कहा।

मंत्र-तंत्र

बहुत दिनों की बात है। एक राजा के राज्य में एक गृहस्थ के घर एक लड़के का जन्म हुआ। माँ-बाप ने उसका नाम "कुमार" रखा। कुमार के बड़े होने पर उसके माता-पिता ने उसका विवाह एक गृहस्थ की लड़की से कर दिया। कुछ दिन बाद उसके लड़के-लड़कियाँ भी हुई। फिर उनमें से प्रत्येक एक-एक गृहस्थ हो गए।

कुमार बड़ा अच्छा आदमी था। कभी जीवहत्या नहीं करता, दूसरे की चीज न लेता, झूठ नहीं बोलता, कोई नशा न करता, और दूसरों की स्त्री को माँ के समान समझता।

कुमार जिस गाँव में रहता था, वह एक बहुत छोटा गाँव था। उसमें केवल तीस गृहस्थों के घर थे। एक दिन तीसों घरों के गृहस्थों को एक काम से एक जगह मिलना था, पर गाँव में ऐसी जगह न थी जहाँ सभी एकत्र हो सकें। कुमार उन तीसों में से एक था। सबके साथ एक जगह पहुँचकर उसने एक स्थान को धूल-मिट्टी हटाकर साफ कर दिया। उस स्थान के साफ होते ही एक आदमी वहाँ आकर खड़ा हो गया। कुमार उससे कुछ न कहकर दूसरी जगह साफ करने लगा। इसके साफ होने पर एक तीसरा आ धमका। इस तरह एक-एक जगह साफ करते-करते वह एक-एक आदमी के लिए जगह करता गया और अन्त में सबके लिए जगह कर दी।

बाद को जिसका जो काम था, कर-कराके उन्होंने वहाँ एक चबूतरा

तैयार किया । वहाँ वे यथासमय आने, बैठने-उठने तथा आमोद-प्रमोद करने लगे । गाँव में कोई नया आदमी आता तो वह भी वहीं जाता था । इस तरह उनके दिन कटने लगे ।

कुछ दिन बाद वहीं पर उन्होंने एक छोटा-सा घर बना लिया और उसमें बैठने के लिए चटाई आदि जरूरी चीजों का संग्रह भी धीरे-धीरे कर लिया । इस तरह वे वहाँ समयानुसार आते, बातचीत और आमोद-प्रमोद करते ।

खूब सुबह उठकर वे अपने- अपने घर के काम-काज कर लेते । फिर अपना खुरपा, हँसुआ, कुदाल लेकर घर से बाहर होते और चौरस्ते पर या और कहीं अगर काठ-पत्थर रहता तो हटा देते । गाड़ी या आदमी के जाने में यदि किसी प्रकार की बाध की संभावना होती तो उसे काटकर फेंक देते या हटा देते । ऊँची- नीची जगहों को समान कर देते । ज़रूरत होने पर पुल बाँध देते, तालाब खोद लेते और जिससे जो हो सकता था, दान करते थे । कुमार के गुण से इस गाँव के सभी लोग सब बातों में खूब अच्छे हो गए ।

दिन बीतने लगे । इधर गाँव के मुखिया ने सोचा कि "बात क्या है । पहले तो गांववाले बदमाशी करते थे, शराब पीते थे और शराब के कारण मेरी आमदनी भी हो जाती थी । शराब पीकर वे अंट-शंट काम करते थे और उसके लिए जुर्माना करने पर भी कुछ आमदमी हो जाती थी । पर इस कुमार ने गाँव को ऐसा बनाया कि ये न शराब पीते हैं, न जीवहिंसा ही करते हैं । सभी भलेमानस हो गए । अच्छा, ठहरो ! राजा के पास शिकायत करके दिखा देता हूँ कि ये कैसे भलेमानस हैं ।"

मुखिया राजा के पास जाकर बोला, "महाराज, गाँव के सभी आदमी चोर हो गए हैं, इनका उपद्रव बहुत बढ़ गया है । कुछ उपाय कीजिए नहीं तो बचना मुश्किल है ।"

राजा ने हुक्म दिया, "जाओ, चोरों को हाजिर करो ।"

मुखिया ने सबको बाँधकर हाजिर किया और राजा से कहा,

'महाराज, हुजूर के हुक्म के मुताबिक मुजरिम हाजिर हैं।"

राजा ने उनमें से किसी से न तो कुछ पूछा और न कहा। तुरंत हुक्म सुना दिया, "जाओ, हाथी के पैर से कुचलकर इन्हें मार डालो।"

राजमहल के लम्बे-चौड़े आँगन में उन्हें बाँधकर लिटा दिया गया। एक बड़ा हाथी मँगवाया गया। इन आदमियों में से एक कुमार भी था। उसने उन सबको पुकारकर कहा, "देखो भाई, यह ठीक है कि राजा अन्याय कर रहे हैं और यह भी सच है कि हाथी हम लोगों को अभी मार डालेगा। पर तुम लोग राजा पर क्रोध न करना। जैसे अपना शरीर हमें अच्छा लगता है और उससे हम जैसा प्रेम करते हैं, राजा के शरीर से भी हम लोगों का वैसा ही प्रेम होना चाहिए।" उन्होंने ठीक वैसा ही किया।

राजा के आदमियों ने हाथी को ऐसे चलाया कि वह इन लोगों को कुचल दे। पर वह किसी तरह आगे न जा सका। चिंघाड़कर पीछे लौट आया। भाग चला। दूसरा हाथी मँगवाया गया। वह भी आगे न बढ सका। फिर तीसरा, चौथा। इस तरह बहुत सारे हाथी बुलाए गए, पर एक भी आगे नहीं बढ़ सका। सभी पीछे लौटकर भाग गए।

राजा ने कहा, "जान पड़ता है, इनके हाथ में कोई दवा है। अच्छा, इनके हाथ खुलवाकर देखो।"

राजा के आदमियों ने खूब खोजा, मगर कुछ भी नहीं मिला। उन्होंने कहा, "महाराज, इनके हाथ में कुछ नहीं है।"

राजा ने कहा, "जान पड़ता है, ये कुछ मंत्र-तंत्र जानते हैं।" उन्होंने खुद ही पूछा, "क्यों जी, तुम लोग क्या कोई मंत्र-तंत्र जानते हो ?"

कुमार ने कहा, "महाराज, हम लोग कोई मंत्र नहीं जानते। हम तीसों आदमी जीवहिंसा नहीं करते, दूसरों की चीज नहीं लेते, झूठ कभी नहीं बोलते और शराब भी नहीं पीते। सबको मित्र समझते हैं। जो हो सकता है, सो दान करते हैं। ऊँची-नीची जमीन को समान कर देते हैं। लोगों के लिए तालाब खोद देते हैं और घर बना देते हैं। महाराज, अगर हम लोग कोई मंत्र जानते हैं तो बस यही। और कोई मंत्र नहीं जानते।"

राजा इनकी बात सुनकर बड़े खुश हुए। मुखिया की जमीन-जायदाद जब्त कर ली गई और उन लोगों को उनका गाँव और एक बड़ा हाथी दे दिया गया।

— हजारी प्रसाद द्विवेदी

बोध प्रश्न

संक्षेप में उत्तर दीजिए –

1. "कुमार बड़ा आदमी था" यह बताने के लिए लेखक ने उसके किन गुणों का उल्लेख किया है ?
2. कुमार और उसके मित्र गाँव के भले के लिए क्या-क्या काम करते थे ?
3. मुखिया राजा के पास शिकायत करने क्यों गया ?
4. दंड मिलने पर भी कुमार ने अपने साथियों को क्या सलाह दी?
5. कुमार का "मंत्र-तंत्र" क्या था ?

II. कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से उचित शब्द चुनकर वाक्य पूरे कीजिए –

1. गाँव में ऐसी जगह न थी जहाँ सभी ---------- हो सके।
   (एकत्र/सम्मिलित/शामिल)
2. यदि किसी प्रकार की बाधी की -------- होती तो उसे काटकर फेंक देते।
   (आशा/आकांक्षा/संभावना)

3. शराब पीकर गाँव वाले ------- काम करते हैं।

(उंट-शंट / भले-बुरे/छोटे-मोटे)

4. लोग ऊँची-नीची जमीन को --------- कर देते हैं।

(समान/असमान गहरी)

अतृप्त-कामना

जोगलांबा प्रातःकाल अपने मालिक के घर पहुँच जाती। वहाँ से काम की सूची लेकर खलिहान में चली जाती। वह बड़ी लगन से धान ओसाती। उसे कभी कोई शिकायत करते किसी ने नहीं देखा। वह कब खाती है, कब सोती है, यह भी बहुत कम लोगों को पता था। उसके चेहरे पर न कभी किसी ने थकावट देखी और न परेशानी।

पर आज उसके चेहरे पर उदासी देख मालिक रघुराम का दिल कचोट उठा। मगर उसने जोगलांबा से इसका कारण पूछने का साहस नहीं किया।

जोगलांबा अपनी परेशानी को छिपाने का प्रयत्न करके भी छिपा नहीं पा रही थी। रह-रहकर उसकी आँखों से आँसू निकल आते। वह लोगों की आँख बचाकर आँचल से आँसू इस तरह पोंछ लेती मानो उसकी आँखों में गिरी किरकिरी निकल रही हो।

करीब दोपहर के समय मालकिन अपने नाती की खोज में खलिहान में आई तो उसकी दृष्टि जोगलांबा पर पड़ी। उसे देखकर उसने पूछा – "अरी ! बात क्या है ? आज तुम मुझसे बात तक नहीं करतीं। क्या हुआ? लड़के का परीक्षाफल क्या हुआ ?"

सहानुभूति की इन बातों को सुनने पर जोगलांबा का दिल उमड़ पड़ा। सजल नेत्रों से बोली – "माई ! सब ठीक है। परेशानी की कोई बात नहीं।"

"छिपाने की कोशिश न करो। तुम्हारा चेहरा ही बता रहा है। न

मालूम, तुम कब से रो रही हो। चलो, मेरे साथ घर चलो।"

"नहीं, माई। मुझे आज शाम तक ओसाने का काम पूरा करना है। कल सारा अनाज कुठलों में भरवा देना है।"

"तुम्हारे अकेले के जाने से काम थोड़े ही रुक जाएगा ? चलो, चलें।" यों कहते मालकिन ज़बरदस्ती जोगलांबा को अपने साथ ले गई।

मालकिन की सांत्वना पाकर जोगलांबा फूट पड़ी और बोली – "माई! आज सुबह उठकर मैंने देखा, तो मेरे आराध्य "नटराज" की काँसे की मूर्ति गायब है। वह मूर्ति मुझे मेरी सास दे गई थी। वह मुझे प्राणों से भी प्यारी थी। मैं प्रतिदिन उसकी पूजा करती थी। जब तक वह मेरे घर रही, मेरे मन में कोई चिन्ता या परेशानी नहीं रही। यही मेरी चिन्ता का कारण है। मुझे आश्चर्य होता है कि वह मूर्ति गायब कैसे हो गई? कल रात को सोने के पहले मैंने मूर्ति के सामने जाकर प्रणाम किया था। सुबह उठकर देखती हूँ, तो नदारद है। मुझे डर लगता है कि कहीं भगवान मुझसे रुष्ट होकर चले न गए हों।"

"अरी ! तुम भी कैसी पागल हो। बड़े-बड़े पापियों के घरों में भगवान बंद हैं। उनके सारे दुष्कर्मों को वे जानते हैं। फिर भी वे उन घरों को छोड़कर भागते नहीं। तुम तो भली हो। तुमने भगवान को रुष्ट करनेवाला कोई काम थोड़े ही किया है ? तुम्हारे घर के ही किसी ने उसे हड़प लिया होगा।"

"नहीं, मालकिन ! यह नामुमकिन है। ऐसा कभी नहीं हो सकता। मेरे पति नटराज के बड़े भक्त हैं। मेरा पढ़ा-लिखा लड़का है। क्या वह ऐसा कर सकता है ?"

"क्यों नहीं ? पढ़ाई के साथ इसका क्या संबंध है ? जिसके दिल में चोर बैठा हुआ है, वह चोरी करेगा ही। आज के ज़माने में यह समझना मुश्किल है कि कौन चोर है और कौन साधु है।"

"नहीं, मालकिन ! मेरा लड़का चोर नहीं हो सकता। कभी नहीं। वह उसी मूर्ति का बेटा है, क्या वह अपने बाप की चोरी करेगा ?"

"अरी ! तुम भी कैसी पागल हो । आज के ज़माने में लोग अपने बाप तक की हत्या कर डालते हैं । मूर्ति की चोरी कौन-सी बड़ी बात है ?"

मालकिन के मुँह से ये शब्द सुनने पर जोगलांबा का दिल काँप उठा। वह सोचने लगी कि सुबह जब वह काम कर निकली थी तो बेटा गणेश घर से गायब था । वह मुझसे कहे बिना कभी नहीं जाता था । पति कल से थोड़े अस्वस्थ थे और खाट पर पड़े हुए थे । रात को घर पर कोई नहीं आया। फिर भगवान की मूर्ति कैसे गायब हो सकती है ? क्या उसका लड़का भगवान की मूर्ति चुराएगा ? वह भगवान का पुत्र ही तो है ।

"मैं सदैव भगवान से यही कामना करती थी कि वह मेरे लड़के को सुबुद्धि दे, उसे शिक्षित और योग्य बनाए । क्या मेरी कामना अतृप्त रह जाएगी ? ऐसा कभी नहीं हो सकता है । भगवान बड़े ही दयालु हैं । वे सबकी सुनते हैं । क्या मेरी नहीं सुनेंगे ?"

इधर कुछ दिनों से आस-पास के गाँवों के मंदिरों की प्राचीन मूर्तियाँ गायब हो चुकी थीं । तहकीकात के सिलसिले में पुलिस का एक सिपाही भी गाँव में आया था । गाँव के पटेल रघुराम ने उसे यह समझाकर वापस भेज दिया कि हमारे गाँव में देवता की मूर्तियों को चुरानेवाला व्यक्ति आज तक न पैदा हुआ है, न पैदा होगा । हम मंदिरों के दरवाज़ों पर ताले तक नहीं लगाते । कौन ऐसा कमबख़्त होगा जो भगवान को बेचने के लिए तैयार हो जाएगा ।

एक सप्ताह बीत गया । पटेल रघुराम कर-वसूली के लिए चौपाल में बैठा ही था कि पुलिस ने तीन बंदियों को लाकर उसके सामने खड़ा किया। उनमें एक रघुराम का बेटा था, दूसरा जोगलांबा का बेटा और तीसरा पुलिस का एक सिपाही, जो एक हफ़्ते पहले तहकीकात के लिए उस गाँव में आया था । उसके साथ एक पुलिस इंस्पेक्टर और पाँच-छह और सिपाही भी थे ।

उन तीनों ने मिलकर पिछली रात को गाँव की कुछ मूर्तियों की चोरी की थी, एक ट्रक में ले जाते हुए वे पकड़े गए थे । अपने पुत्र को बंदी के

रूप में सामने पाकर पटेल रघुराम का सिर झुक गया। पुलिस इंस्पेक्टर कह रहा था – "पटेल साहब ! देखिए, आपका लड़का शिक्षित है, संपन्न परिवार का है, धर्म को मानता है, फिर भी धन के लोभ में पड़कर वह विदेशी एजेंसी के हाथ अपने ही देवी-देवताओं की मूर्तियां बेच रहा था। इंस्पेक्टर के मुँह से यह बात सुनने पर रघुराम को लगा, मानों उसके कलेजे पर छुरी भोंक दी गई हो। उसने कहा – "महाशय ! धर्म-द्रोहियों को किसी भी हालत में क्षमा नहीं किया जा सकता। अब मैं सिर उठाकर इस गाँव में चल भी नहीं सकता। इस कलंक को धोने के लिए एकमात्र उपाय यही है कि मेरे बेटे को कड़े से कड़ा दंड दिया जाए।"

इंस्पेक्टर तब उन बंदियों को लेकर चला गया। रघुराम दुखी मन से घर लौटा। जोगलांबा को पहले से ही इस बात की ख़बर लग चुकी थी। वह अपने मालिक के घर पर उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। मालिक के मुँह से सारी बातें सुनकर जोगलांबा रुद्ध-कंठ से बोली – "मालिक ! मैं ऐसे बेटे का चेहरा तक देखना नहीं चाहती। मैं अपने बेटे को चरित्रवान और उच्च अधिकारी के रूप में देखना चाहती थी। मेरी कामना अतृप्त रह गई। इसी बात का मुझे दुख है।" यह कहते हुए वह फूट-फूटकर रोने लगी।

बोध प्रश्न

I. उत्तर दीजिए –

1. जोगलांबा का स्वभाव कैसा था ?
2. जोगलांबा को मूर्ति के प्रति अत्यधिक लगाव क्यों था ?
3. जोगलांबा के इस विश्वास का क्या आधार था कि उसका पति और पुत्र मूर्ति नहीं चुरा सकते ?

4. मूर्ति चुराने वाले कौन-कौन थे ?
5. जोगलांबा की कामना क्या थी ? वह क्यों अतृप्त रह गई ?

II. नीचे लिखे वाक्य किसने कहे हैं ?

1. जिसके दिल में चोर बैठा हुआ है वह चोरी करेगा ही।
2. भगवान बड़े ही दयालु है वे सबकी सुनते हैं।
3. धन के लोभ में पड़कर वह विदेशी ऐजेन्सी के हाथ अपने ही देवी-देवताओं की मूर्तियाँ बेच रहा था।
4. कल सारा अनाज कुठलों में भरवा देना है।
5. उनके सारे दुष्कर्मों को वे जानते हैं।

मेहनत की कमाई

हातिम ताई बड़ा दानी था। वह हर रोज सैकड़ों आदमियों को रोटी-कपड़ा दिया करता था।

एक बार वह जंगल में से गुजर रहा था। एकाएक वह रुक गया। उसने देखा कि एक लकड़हारा सिर पर लकड़ियों का गट्ठर उठाए चला आ रहा है। उसके पाँव बोझ के कारण उखड़ रहे थे और वह थकान से चूर दिखाई दे रहा था।

हातिम को उस पर दया आई। उसने पूछा — "इतनी तकलीफ़ ? किसलिए उठाते हो बाबा ?"

लकड़हारे ने जवाब दिया — "क्या करूँ, भाई ? पेट की आग तो बुझानी ही है।"

हातिम फिर बोला, "हाँ, यह तो सच है बाबा। पर क्या तुमने सुना नहीं हातिम प्रतिदिन सैकड़ों आदमियों को खाने के साथ कपड़ा-लत्ता भी दिया करता है। तुम भी उसके मेहमान हो जाओ न। बैठे-बिठाए सब-कुछ मिल जाएगा।"

इस पर लकड़हारा मुस्करा दिया। बोला — "आप भी खूब हैं। भई, जो इन्सान मेहनत से कमाकर रोटी खाता है वह हातिम के एहसान पर क्यों जीने लगा ?"

यह कहकर लकड़हारा अपनी राह हो लिया। हातिम प्रशंसा भरी नजरों से उस लकड़हारे को देखता रहा।

जैसी करनी वैसी भरनी

किसी गाँव में एक वैद्य रहता था। उसकी दुकान चलती ही नहीं थी। कहावत है कि प्यासा कुएँ के पास जाता है कुआँ प्यासे के पास नहीं जाता। लेकिन उस वैद्य की रीति-नीति उलटी थी। वह स्वयं रोगियों की खोज में इधर-उधर चक्कर लगाया करता था। एक दिन सारे गांव का दौरा करने पर भी उसे कोई रोगी नहीं मिला। वह उदास होकर टहलते-टहलते गांव के बाहर चला गया। वहां एक वृक्ष के कोटर में उसने एक विषैले सांप को सोते देखा। उसे देखते ही वैद्य को कुछ कमाने की एक तरकीब सूझी।

उस पेड़ से कुछ दूरी पर गाँव के कई छोटे-छोटे लड़के खेल रहे थे। वैद्य ने सोचा कि यदि इनमें से किसी लड़के को सांप से डसवा दूँ तो मुझे उसकी चिकित्सा का अवसर सहज मिल जाएगा और मुझे अच्छी रकम मिल जाएगी।

पेट के लिए लोग बड़े-बड़े पाप करने को तैयार हो जाते हैं। वैद्य ने स्वार्थवश उन अबोध बालकों के जीवन को घोर संकट में डालने का निश्चय कर लिया। वह उन बालकों के पास गया और बोला, "भाई, कोई मैना का बच्चा लेगा ?"

एक चतुर बालक चटपट बोल उठा, "हाँ-हाँ, मैं लूंगा, कहाँ है दादा?"

वैद्य बोला, "मेरे साथ आओ, मैं दिखाता हूँ। अकेले चलो, नहीं तो हल्ला-गुल्ला सुनकर वह उड़ जाएगा।"

वह उस लड़के को उस वृक्ष के पास ले गया। वहां कोटर की ओर इशारा करके उस दुष्ट वैद्य ने कहा, "देखो, उसी कोटर में है, धीरे-धीरे जाओ, हाथ डालकर निकाल लाओ।"

लड़के ने वृक्ष पर चढ़कर कोटर में हाथ डाला। वहां उसकी मुट्ठी में जो भी चीज आई उसे उसने चटपट पकड़कर बाहर निकाला। देखा तो मैना के बच्चे की जगह उसके हाथ में सांप की गरदन आ गई थी। उसने उसी समय झटके के साथ उस सांप को दूर फेंक दिया। संयोग से वह वैद्य ही के सिर पर जा गिरा। वैद्य अपने बचाव के लिए बड़े जोर से उछला, लेकिन सांप उसकी गर्दन से लिपट गया। सांप ने उसे डस लिया। वह वहीं छटपटाकर गिर पड़ा और कुछ ही क्षणों में मर गया। इस प्रकार उस वैद्य को अपनी करनी का फल मिल गया।

आपसी बैर

गाय और घोड़ा जंगल में साथ-साथ रहते थे। दोनों के संबंध बड़े ही मधुर थे।

एक दिन दोनों में किसी बात पर कहा सुनी हो गई। घोड़ा सोचने लगा, "गाय को मजा चखाना चाहिए।" वह गाय को तंग करने का उपाय सोचने लगा। कुछ सोचकर घोड़ा आदमी के पास गया और कहने लगा, "शायद तुम्हें मालूम नहीं है कि गाय के थनों में अमृत के समान दूध है। अगर तुम उसे पकड़ लोगे तो वह तुम्हारे लिए बहुत ही अच्छा रहेगा।"

आदमी ने कहा, "यह तो ठीक है भाई, पर मैं उसे पकड़ूँगा कैसे ? वह तो बहुत तेज़ दौड़ती है।

घोड़े ने बिना सोचे समझे कहा, "दौड़ने में वह मुझसे बाजी नहीं ले सकती। तुम मेरी पीठ पर बैठो और उसे पकड़ लो।"

आदमी को क्या ऐतराज होता। उसने घोड़े को लगाम लगा दी और गाय को पकड़कर बाँध लिया।

उसी दिन से वे दोनों आदमी के गुलाम हो गए।

दो रास्ते

एक बादशाह के दो बेटे थे। दोनों वीर थे। बहुत ही सुन्दर और समझदार। बादशाह ने सोचा दोनों ही घुड़दौड़ और लड़ाई के शौकीन हैं। दोनों का स्वभाव भी बड़ा तेज है। कहीं ऐसा न हो कि मेरे बाद ये आपस में लड़ पड़ें। उसने अपना राज्य दो हिस्सों में बाँट लड़कों के हवाले कर दिया।

कुछ समय बाद बादशाह चल बसा। दोनों भाइयों ने अपनी-अपनी सूझ से अलग-अलग राह अपनाई। एक भाई यश चाहता था और दूसरा धन-दौलत।

पहला भाई अपनी जनता को सब तरह खुशहाल करने की कोशिश करने लगा। वह फ़कीरों और दुखी लोगों का दुःख बांटता। जरूरतमंदों की जरूरतें रुपए-पैसे से पूरी करता। भूखों को खाना देता। रहने को जगह देता। अपनी फ़ौज को खुश रखता।

इस तरह उसने अपना खजाना खाली कर दिया और फौज जमा की, जिससे बैरी-दुश्मन का भय न रहे और लोग सुख से रहें। उसका इंतजाम इतना अच्छा था कि अमीर सौदागर बेखटके सफर किया करते। बादशाह इतना न्यायप्रिय और सज्जन था कि उसके ज़माने में किसी को थोड़ा-सा भी दुःख न पहुँचता। देश की जनता उसके साथ थी। बड़े-बड़े सरदार उसके इशारे पर जान देते थे। फल यह हुआ कि उसका यश चारों ओर फैल गया। दूर-दूर के बादशाह उसका लोहा मानने लगे और उसकी अधीनता में रहने में अपने को खुश किस्मत समझते थे।

दूसरे भाई ने अपने तख्त और ताज के बढ़ाने के लिए किसानों पर ज़मीन का लगान बढ़ा दिया। सौदागरों के माल में बेईमानी करने लगा। गरीबों पर जुल्म ढाने लगा। निन्यानवे के फेर में न उसने खुद खाया, न दूसरों को खाने दिया। धन-माल के जमा करने में उसने इतनी धूर्तता दिखाई कि उसकी सेना परेशान हो उठी।

सौदागरों ने जब यह खबर सुनी तो डर के मारे उसके देश के साथ व्यापार बंद कर दिया। खेती पैदा न हुई। लोग भूखों मरने लगे। चारों ओर कोहराम मच गया। उसकी किस्मत का सितारा डूबते देख दुश्मनों ने उस पर चढ़ाई कर दी। दुश्मन के घोड़ों की टापों ने उसका देश रौंद डाला।

उसने अपने कर्तव्य से मुँह मोड़ लिया था। इसलिए जनता उससे नाराज थी वह लोगों से सहायता की आशा कैसे रखता ? किससे कर माँगता, क्योंकि किसान ही भाग गए थे। परिणाम यह हुआ कि वह अपना बैरी आप बन गया और अपने राजपाट से हाथ धो बैठा। उसका घमंड चूर-चूर हो गया।

बोल का मोल

एक आदमी बूढ़ा हो चला था। उसके चार बेटे थे। बेटे यों तो सभी काम जानते थे। किन्तु बोलचाल और आचरण में चारों एक जैसे न थे। पिता ने कई बार उनसे कहा – "यदि तुमने अपनी बोलचाल और आचरण नहीं सुधारा तो जीवन में सफल नहीं हो सकते।" किन्तु पिता की बात पर उन्होंने कभी ध्यान नहीं दिया।

एक बार चारों बेटे और पिता लम्बी यात्रा से लौट रहे थे। इस यात्रा के बीच उनके पास खाने-पीने को कुछ भी न बचा था। जो धन था वह भी खत्म हो चुका था। वे लोग कई दिन से भूखे थे। बस यही चाहते थे कि किसी तरह जल्दी-से-जल्दी अपने घर पहुँच जाएँ।

पाँचों एक जगह सड़क के किनारे विश्राम कर रहे थे। तभी एक व्यापारी अपनी बैलगाड़ी को हांकता हुआ निकला। वह व्यापारी किसी मेले में जा रहा था। उसने बैलगाड़ी में तरह-तरह के पकवान और मिठाई भर रखी थी। वह बेचने के लिए जा रहा था।

पकवानों और मिठाइयों की महक से पाँचों के मुँह में पानी आने लगा। बूढ़े ने कहा – "जाओ ! व्यापारी से मांगो। शायद कुछ खाने को दे दे।"

सुनकर पहला बेटा व्यापारी के पास गया। बोला – "अरे ओ व्यापारी, इतना माल ले जा रहा है। थोड़ा मुझे दे। भूख बहुत लगी है।"

व्यापारी ने सोचा – यह कितना मूर्ख है। दूसरों से मांगते समय मीठी

वाणी बोलना चाहिए । अच्छा ! यह जितनी कठोर वाणी बोल रहा है, इसे उतना ही कठोर पकवान दूँगा । यह सोचकर उसने एक सूखा पकवान दे दिया ।

व्यापारी थोड़ी दूर ही गया कि दूसरा भाई उसके पास पहुँचा । बोला – "बड़े भाई प्रणाम ! क्या छोटे भाई को खाने के लिए कुछ भी न दोगे ?"
व्यापारी ने सोचा – इसने मुझे भाई कहा है । छोटे भाई को देना मेरा कर्तव्य है । उसने कहा – "लो छोटे भाई ! मिठाई खाओ ।" और उसने एक दोना भर कर मिठाई दे दी ।"

अब तीसरा भाई व्यापारी के पास गया । वह बोला – " आदरणीय! आप मेरे पिता समान हैं । मुझे कुछ खाने को दें ।"

व्यापारी ने सोचा – यह मुझे पिता जैसा आदर दे रहा है । इसे तो भरपेट मिठाई देनी चाहिए । और उसने कई दोनों में बहुत से पकवान और मिठाइयां भरकर दे दीं ।

अन्त में चौथा पुत्र गया । उसे देखकर व्यापारी मुस्कराया तो वह भी मुस्करा दिया । उसने कहा "मित्र ! इस मुसीबत की घड़ी में तुम सहारा बन सकते हो । क्या तुम मुझे भूखा ही रखोगे ।"

व्यापारी ने सोचा – मित्र पर लोग सब कुछ न्यौछावर कर देते हैं फिर यह मित्र तो मुसीबत में है । इसकी मदद करनी चाहिए । मेरा क्या ? शहर जाकर और माल भर लाऊँगा । उसने कहा – "मित्र । इस गाड़ी में लदा सारा पकवान और मिठाइयां तुम्हारे लिए हैं । चलो, कहां ले चलूँ ।"

और वे दोनों वहाँ आ गए, जहां पिता के साथ बाकी तीनों बेटे बैठे थे। पिता ने उन सबसे कहा – "अब तुम सब अपनी-अपनी माँगी हुई भोजन सामग्री की तुलना करो । जिसने जैसा बोला और आचरण किया, उसे वैसा ही मिला । क्या अब भी अपने बोल का मोल नहीं समझे ।"

लुकमान हकीम

किसी ने लुकमान हकीम से पूछा – "आपने इतना अदब कहाँ से पाया? "

लुकमान ने जवाब दिया – "बेअदबों से ।"

पूछने वाला असमंजस में पड़ गया । उसने कहा – "यह कैसे ? भला उनसे कोई क्या सीख सकता है ।"

लुकमान ने मुसकराते हुए कहा – "मियाँ, इसमें हैरान होने की क्या बात है ? मैंने उनमें जो बुरी बात देखी, उससे अपने-आपको दूर रखा, बस इतनी-सी बात है । भई सीखने वाला तो खेल-कूद से भी सीख लेता है। पर मन्द बुद्ध वाला ज्ञान के सौ पाठ पढ़ने के बाद भी कुछ नहीं पा सकता ।"

बोध प्रश्न

I. संक्षेप में उत्तर दीजिए –

1. "दो रास्ते" कहानी में दोनों भाइयों के रास्तों में क्या अंतर था?
2. "बोल का मोल" कथा के आधार पर बताइए कि चारों पुत्रों को भोजन सामग्री भिन्न-भिन्न मात्रा में क्यों मिली ?

3. बेअदबों से भी अदब सीखा जा सकता है ? कैसे ? "लुकमान हकीम" कथा के आधार पर बताइए ?
4. लकड़हारे में ऐसी क्या विशेषता थी, जिसके कारण हातिम ने उसे प्रशंसा की नजरों से देखा ?
5. वैद्य ने बालकों का जीवन संकट में डालने का निश्चय क्यों किया ? "जैसी करनी वैसी भरनी" कहानी के आधार पर बताइए।
6. बैर पालने का घोड़े को क्या नुकसान हुआ ?

II. निम्नलिखित निष्कर्ष किन बोध कथाओं से निकाले जा सकते हैं ? प्रत्येक के सामने उस बोध कथा का नाम लिखिए –

1. परिश्रमी व्यक्ति किसी की सहायता नहीं चाहता। -------
2. दुर्गुणों से भी प्रेरणा ली जा सकती है। -------------
3. जो दूसरों का बुरा चाहता है वह अपना बुरा करा बैठता है। -----------
4. मीठी वाणी से सब प्रसन्न होते हैं। -------------
5. जो जैसा करता है, वैसा फल पाता है। -----------
6. धन-दौलत से यश बड़ी चीज है। -----------

चिड़िया की आँख

गुरु द्रोणाचार्य कौरव और पांडव पुत्रों को धनुष चलाने की विद्या सिखाने आए। गुरु द्रोणाचार्य धनुष चलाने में सबसे ज्ञानी थे। उन्होंने दो- चार दिन में ही देख लिया था कि अर्जुन के मुकाबले इस विद्या को कोई नहीं सीख सकता। अर्जुन बचपन से ही बड़े चतुर और चुस्त थे। उन्हें धनुष चलाने की विद्या सीखना बहुत अच्छा लगता। गुरु द्रोणाचार्य भी ऐसे शिष्य को पाकर प्रसन्न थे। उन्होंने धनुर्विद्या संबंधी सारा ज्ञान अर्जुन को सिखा दिया। अर्जुन ने भी बड़ी लगन और मेहनत से इसे सीखा।

जब क़ाफी समय बीत गया तो एक दिन गुरु द्रोणाचार्य ने अपने शिष्यों की परीक्षा लेने का निश्चय किया। अपने सब शिष्यों को लेकर वे जंगल में गए।

घूमते- घूमते एक जगह द्रोणाचार्य रुक गए। उन्होंने पेड़ पर बैठी एक चिड़िया की ओर इशारा करके कहा, "इसे तीर मारकर गिराना है। लेकिन तीर चिड़िया की आँख में लगना चाहिए।"

इसके बाद उन्होंने एक-एक कर सभी शिष्यों को बुलाया। वे उनसे पूछते, "तुम क्या देख रहे हो ?" कोई कहता, "चिड़िया, पेड़, पत्तियां।" कोई कहता "चिड़िया के पंख, चोंच, सिर, पेड़ की डाल।"

सभी शिष्यों ने ऐसे ही उत्तर दिए और गुरु द्रोणाचार्य ने उन्हें तीर नहीं चलाने दिया।

अब अर्जुन की बारी आई। अर्जुन ने निशाना लगाया। गुरु द्रोणाचार्य

ने पूछा – "अर्जुन तुम क्या देख रहे हो ?"

"गुरुवर ! मुझे सिर्फ़ चिड़िया की आँख दिखाई दे रही है।"

"बिल्कुल ठीक ! तीर छोड़ दो।"

और निशाना बिल्कुल ठीक लगा। अर्जुन विजेता घोषित किए गए।

एक बार और ऐसी परीक्षा का समय आया। गुरु द्रोणाचार्य नदी में नहा रहे थे और उनके शिष्य वहाँ खड़े थे। अचानक मगर ने उनका पर पकड़ लिया। द्रोणाचार्य ने कहा, "इस तरह बाण चलाओ कि मगर मरे भी नहीं और मेरा पैर छूट जाए।"

सभी शिष्य घबराकर देखने लगे। ऐसा तीर चलाना तो वे जानते ही न थे। किन्तु अर्जुन ने ऐसा ही तीर चलाया, जिससे मगर का मुँह खुल गया। द्रोणाचार्य का पैर बाहर निकल आया।

अर्जुन ने गुरु द्रोणाचार्य से जो धनुर्विद्या सीखी थी, उसी के बल पर उन्होंने महाभारत के युद्ध में विजय-पताका फहराई थी।

जो डर गया, वह मर गया

उसका नाम नरेन्द्र था। एक दिन वह काशी विश्वनाथ मंदिर में खेल रहा था। तभी वहाँ बंदरों का झुंड आ गया। उस झुंड में बड़े-छोटे सभी तरह के बंदर थे। बालक नरेन्द्र के पास थोड़े-से चने थे। उन चनों को दिखाकर उसने बंदर के एक बच्चे को बुला लिया। छोटा बच्चा चने खाने लगा। बालक नरेन्द्र उससे खेलने लगा। लेकिन जैसे ही नरेन्द्र ने उसे पकड़ा कि वह ची... चीं... चीं... करके चिल्ला उठा। बंदर के बच्चे की वह आवाज बंदरों के सरदार ने सुनी। वह तुरन्त उसकी रक्षा के लिए दौड़ा। बंदरों का सरदार बड़ा लंबा-चौड़ा और भयानक था। उसे देखकर नरेन्द्र भागा। बंदर का बच्चा अभी भी चीख रहा था। आगे-आगे नरेन्द्र भाग रहा था, पीछे-पीछे बंदरों का सरदार। नरेन्द्र ने बंदर के बच्चे को नहीं छोड़ा, वह मंदिर के अंदर जा छिपा परंतु बंदरों का सरदार वहाँ भी पहुँच गया। नरेन्द्र फिर भागा। मंदिर के बाहर आया। वह बड़ी तेजी से भाग चला। इसी बीच बंदर का बच्चा हाथ से छूटकर भाग निकला। लेकिन बंदरों का सरदार अभी भी उसका पीछा कर रहा था। शायद उसने छोटे बंदर को छूटकर भागते नहीं देखा था।

आखिर नरेन्द्र किसी तरह भागता-छिपता गंगा किनारे पहुँचा और पानी में कूद गया। बंदरों का सरदार अब मजबूर था। नरेन्द्र काफी देर तक पानी में तैरता रहा। जब उसे लगा कि बंदरों का सरदार चला गया है, तो वह किनारे पर आया। लेकिन पलक झपकते ही बंदर सरदार फिर दांत

किटकिटाता हुआ नरेन्द्र के सामने आ खड़ा हुआ। बस उसी क्षण नरेन्द्र ने सोचा – "जो डर गया वह मर गया ...।" उसने तुरन्त पास ही पड़ा नाव का मोटा डंडा उठा लिया। वह भरपूर ताकत से बंदर सरदार को मारने ही वाला था कि वह डरकर भाग खड़ा हुआ। यह साहसी बालक नरेन्द्र ही बड़े होकर स्वामी विवेकानंद बने, जिन्होंने सारे संसार को ज्ञान से प्रकाशित किया।

छत्रसाल और महाबली

एक बालक जंगल के बीच सिर झुकाए चुपचाप बैठा था। तभी वहाँ से घोड़े पर सवार एक व्यक्ति निकला। बालक को उदास देखकर उसने पूछा, "कौन हो तुम ? यहां क्यों बैठे हो ?"

"तुम कौन हो ?"

"मैं महाबली तेली हूँ। पास ही मेरा गांव है।"

"मैं छत्रसाल हूँ। राजा चंपतराय का छोटा बेटा। मेरे माता-पिता दोनों ही इस दुनिया में नहीं हैं। किन्तु मैं उनके हत्यारे मुगलों से बदला लेना चाहता हूँ।"

"लेकिन कैसे ?"

"यही तो सोच रहा हूँ।"

"यहाँ बैठकर नहीं सोच सकोगे। मेरे साथ चलो। मैं महाराजा चंपतराय का सेवक रहा हूँ।"

बालक छत्रसाल महाबली के साथ उसके घर आए। कुछ दिन वहाँ रहकर उन्होंने अपने बड़े भाई सुजानराय के पास जाने की इच्छा प्रकट की। महाबली ने उन्हें एक घोड़ा और एक तलवार दी। छत्रसाल अपनी यात्रा पर चल दिए।

रास्ते में विंध्यवासिनी देवी का मन्दिर पड़ा। खूब मेला लगा हुआ था। सैंकड़ों लोग दर्शनों के लिए आए थे। छत्रसाल ने सोचा कि वह भी चले। उसने मन्दिर की ओर घोड़ा मोड़ दिया। लेकिन यह क्या ? मेले में अचानक भगदड़ और चीख-पुकार मच गई। छत्रसाल ने देखा कि कुछ मुगल सैनिक बेगुनाह गाँववालों पर कोड़े बरसा रहे हैं।

छत्रसाल ने तलवार खींच ली। वह समझ गया कि अब उसकी परीक्षा की घड़ी आ गई है। वह उन मुगल सैनिकों पर बाज की तरह टूट पड़ा। मुगल सैनिक कई थे। छत्रसाल अकेला था।

छत्रसाल के हमले का जवाब देने के लिए मुगल-सैनिकों की तलवारें भी निकल आईं। भयानक युद्ध शुरू हो गया। एक साधारण-सा लड़का कितनी बहादुरी से लड़ रहा था – यह देखकर ग्रामवासी चकित थे।

एक के बाद एक मुगल सैनिक छत्रसाल की तलवार के घाट उतरते चले गए। छत्रसाल विजयी हुआ। लोगों ने जब उसके बारे में जाना तो सारा आकाश "छत्रसाल की जय" के नारों से गूँज उठा।

यही बालक छत्रसाल बड़ा होकर बुंदेला-वीर छत्रसाल कहलाए। इन्होंने अपनी वीरता के बल पर मुगलों को नाको चने चबवाए थे। जब

इन्होंने अपना राज्य स्थापित कर लिया, उस समय की एक घटना है — एक दिन वे महल के ऊपर बैठे थे। उन्होंने देखा कि एक गाड़ी आकर रुकी। उससे एक बूढ़ा आदमी उतरा और महल की तरफ चला। छत्रसाल ने उस व्यक्ति को तुरन्त पहचान लिया। वे तुरन्त महल से नीचे उतरे। बूढ़े को गोद में उठा कर लाए और अपने सिंहासन पर बिठाने लगे। बूढ़े ने ऐसा करने से मना किया और उन्हें आशीष देने लगा। यह बूढ़ा और कोई नहीं — वही महाबली तेली था। छत्रसाल ने घोषणा की — आज से हमारे नाम के साथ महाबली का नाम भी चलेगा। और वे "छत्रसाल महाबली" कहलाने लगे।

कविता का रस

बालक रवीन्द्रनाथ ठाकुर के पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर बड़े विचारक और पवित्र जीवन बिताने वाले थे। उन्हीं के साथ बालक रवीन्द्र को हिमालय, उत्तर प्रदेश में गंगोत्री आदि की सैर करने को मिली। प्रकृति की ये सब बातें देखना-समझना बालक रवीन्द्र को बहुत अच्छा लगता।

रवीन्द्र की आरंभिक पढ़ाई घर पर ही हुई। पिता अपने काम में लगे रहते। इसलिए रवीन्द्र की देखभाल नौकर किया करते थे। वे फुरसत के समय रवीन्द्र को नदी किनारे घुमाने ले जाते। वे बागों में जाते – फूल-पौधे देखते, चिड़ियां और तितलियां देखते। घंटों वहीं खेलते रहते।

रवीन्द्र की अंग्रेजी की पढ़ाई शुरू से हुई थी। रवीन्द्र को अंग्रेजी कविताएं पढ़ने में बड़ा आनंद आता। रवीन्द्र के एक भाई थे। वे कविताएं लिखते थे। रवीन्द्र ने उनसे ही जाना कि कविता क्या होती है? उन्होंने कहा, "इसमें जो रस होता है वह लोगों को खुशी में डुबो देता है।"

रवीन्द्र ने सोचा कि फूलों के रस से बढ़िया और कौन-सा रस हो सकता है। उन्होंने तय किया कि वह फूलों के रस से कविता लिखेंगे। अगले दिन उन्होंने ढ़ेर-से फूल मंगवाए। नौकर समझ ही न सके कि इतने फूलों का क्या होगा। रवीन्द्र ने दिन-भर सारे फूलों को मसला और रस निकालने की कोशिश की। लेकिन रस न निकला। वे निराश हो गए। शाम को भाई आए। रवीन्द्र ने उन्हें अपनी समस्या बताई तो वे खूब हँसें। तब उन्होंने समझाया कि कविता कैसे लिखी जाती है। बस, फिर तो रवीन्द्र ने

भी कविताएं लिखनी शुरू कर दीं। बड़े होकर यही रवीन्द्र विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनकी कविताओं को देश और विदेश में खूब सम्मान मिला।

अटल प्रतिज्ञा

वह बालक बड़े परिश्रम से पढ़ता और पिता के काम में हाथ बंटाता। साथ ही वह आगे बढ़ने के सपने भी देखा करता। उसका नाम था — गंगाराम। उसके पिता दौलतराम कचहरी में मुंशी का काम किया करते थे। वे मुकदमों की नकलें तैयार करते और अर्जियां लिखते। अमृतसर में दौलतराम की बड़ी इज़्ज़त थी। बेटा गंगाराम अपने घर से काफ़ी दूर बने स्कूल में पढ़ने जाता। स्कूल से छुट्टी होने पर वह पिता के पास कचहरी जाता। वहां वह उनके काम में मदद करता। पिता को गंगाराम का यह परिश्रम अच्छा न लगता। लेकिन करते भी क्या? खर्च चलाने के लिए आमदनी भी तो होनी ही चाहिए।

गंगाराम बचपन से ही परिश्रमी और लगन वाला बालक था। उसकी प्रतिभा से सभी खुश थे। उसके प्रोफेसर लिन्से उसे बहुत प्यार करते थे। शीघ्र ही गंगाराम को छात्रवृत्ति मिलने लगी। गंगाराम उन रुपयों में से आधा हिस्सा अपने पिता को भेजते।

एक दिन की बात है, गंगाराम एक इंजीनियर से मिलने गया। इंजीनियर की कुर्सी खाली पड़ी थी। गंगाराम उसी पर बैठकर उसका इंतज़ार करने लगा। इतने में ही इंजीनियर साहब आ गए। एक मामूली बालक को कुर्सी पर बैठा देखा तो आग-बबूला हो गए। उन्होंने हाथ पकड़कर उसे कुर्सी से उठा दिया और उन्हें अपमानित करते हुए बोले, "तुम इस कुर्सी पर बैठने योग्य नहीं हो।" गंगाराम ने उस समय तो
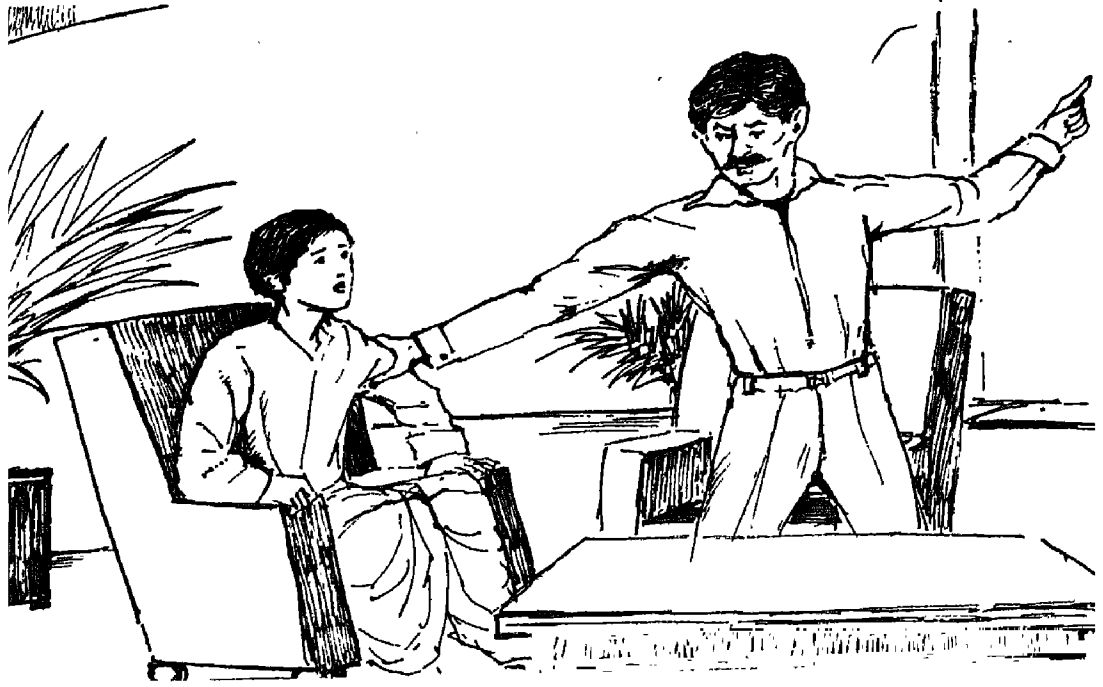
अपमान का घूँट पी लिया, लेकिन प्रतिज्ञा की – "मैं इंजीनियर बनूँगा और एक दिन इस कुर्सी पर अवश्य बैठूँगा।"

बड़ा होकर एक दिन यही बालक देश का प्रसिद्ध इंजीनियर बना और सचमुच उसी कुर्सी पर बैठा।

- हरिकृष्ण देवसरे

बोध प्रश्न

1. गुरु द्रोणाचार्य ने अपने शिष्यों की धनुष-विद्या की परीक्षा लेने के लिए क्या किया ?
2. चिड़िया की आँख के लक्ष्य के सम्बंधों में पूछे गए प्रश्न का अन्य शिष्यों ने क्या उत्तर दिया ?
3. लक्ष्य के संबंध में गुरु के प्रश्न का अर्जुन ने जो उत्तर दिया उस पर चिह्न लगाइए :
   (क) मुझे चिड़िया दिखाई दे रही है।
   (ख) मुझे केवल चिड़िया की आँख दिखाई दे रही है।
   (ग) मुझे पूरा वृक्ष दिखाई दे रहा है।
   (घ) जिस पर चिड़िया बैठी है वह डाल दिखाई दे रही है।
4. बालक नरेन्द्र के पीछे बन्दरों का सरदार क्यों भागा ?
5. बालक नरेन्द्र ने बन्दरों के सरदार से कैसे पीछा छुड़ाया ? सही उत्तर पर सही निशान लगाइए :
   (क) मंदिर में छिपकर
   (ख) गंगा में कूदकर
   (ग) डंडा लेकर बहादुरी से सामना करके
   (घ) भाग कर अपने घर में छिपकर
6. छत्रसाल अकेले तलवार लेकर मुगल सैनिकों पर क्यों टूट पड़े ?
7. छत्रसाल के साथ महाबली विशेषण क्यों जुड़ा ? सही उत्तर पर निशान लगाइए :
   (क) छत्रसाल बहुत बलवान थे
   (ख) पंड़ितों ने उन्हें यह उपाधि दी थी
   (ग) यह महाबली तेली के प्रति उनकी कृतज्ञता थी
   (घ) बड़े भाई सुजानराय उन्हें महाबली कहा करते थे।

8. कविता में ऐसा क्या होता है जो लोगों को खुशी में डुबो देता है ?

9. कवि रवीन्द्रनाथ ने रस से भरी कविता करना कैसे सीखा ?

10. गंगाराम अपने पिता की मदद कैसे करता था ?

11. इंजीनियर की कुर्सी पर बैठने के हठ की प्रेरणा गंगाराम को कैसे मिली ? सही उत्तर पर निशान लगाइए :
    (क) अपने पिता को बैठे देखकर
    (ख) उच्च पद पाने की लालसा के कारण
    (ग) इंजीनियर द्वारा अपमानित होकर
    (घ) देश सेवा की भावना के कारण

शब्दार्थ और संदर्भ

यद्यपि पाठों का चयन करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि पाठ ऐसे हों जिनमें कठिन शब्द न आएँ तथापि कहीं-कहीं कुछ शब्द कठिन लग सकते हैं। यह पुस्तक आपके स्व-अध्ययन की पुस्तक है इसलिए जहाँ भी कोई शब्द कठिन लगा या संदर्भ आपके लिए अनजाना लगा, उन सभी का अर्थ देने का प्रयास किया गया है। इस शब्दकोश की सहायता से आपको इस पुस्तक की कथा-कहानियों को स्वतः पढ़ने और समझने में सहायता मिलेगी। इस प्रकार बिना अध्यापक की सहायता के भी आप इन पाठों को स्वयं पढ़ और समझ सकते हैं।

शब्दार्थ

कठिन शब्द		अर्थ
अंट- संट बोलना		ऊलजलूल, बकवास करना, बेकार की बातें करना
अकस्मात्	-	अचानक, एकदम
अतृप्त	-	जो पूरी न हो सके (इच्छा)
अनुभाग	-	सेक्शन, उपविभाग
अबोध	-	जिसे बोध न हो, नासमझ
अमृत	-	सुधा, एक पदार्थ जिसके बारे में कहा जाता है कि उसे पीने से मनुष्य अमर हो जाता है।
अर्ज़ी	-	प्रार्थना पत्र
अवाक्	-	आश्चर्यचकित होकर खामोश रहना
अविकल	-	जो बेचैन न हो, शान्त
अविनय	-	अशिष्टता

असमंजस	-	पशोपेश, दुविधा, अनिश्चय की स्थिति
असाधारण	-	विशेष, जो साधारण न हो
आग बबूला होना	-	गुस्सा करना
आचरण	-	व्यवहार
आइना	-	शीशा
आमोद- प्रमोद	-	रंग रेलियाँ, मौज- मस्ती
आर्तनाद	-	दुखभरी आवाज़
आशीष	-	आशीर्वाद, बड़ों द्वारा छोटों के प्रति व्यक्त शुभ कामना
उत्पात	-	शरारत, शैतानी
एजेन्सी	-	अभिकरण, वह स्थान या संस्था जो प्रतिनिधि या अभिकर्ता द्वारा काम करती है
एतराज़	-	विरोध
एवज़ में	-	बदले में
कफन-दफन	-	मृत्यु के बाद की रस्में
कमबख्त	-	अभागा
कर्कश-स्वर	-	तीखी आवाज़
कर्तव्य	-	जिसे करना उचित या आवश्यक हो, फ़र्ज़ दायित्व
कलमुँही	-	कुलक्षणा, बुरी औरत
कुर्बानी	-	बलि
कोहराम	-	शोर- शराबा
क्षमादान	-	माफी
खड्ग	-	एक प्रकार की तलवार
खुशकिस्मत	-	भाग्यशाली
खुशहाल	-	मालदार, सम्पन्न
गर्व	-	घमण्ड, अभिमान

गुमसुम	-	खामोश, चुपचाप
गृहस्थ	-	परिवार के साथ रहने वाला व्यक्ति
गौना	-	विवाह के कुछ समय बाद जब दूसरी बार दुल्हन मैके से विदा होकर ससुराल जाती है, इसे गौना करना कहते हैं।
घोषित करना	-	ऐलान करना
चरित्रवान	-	अच्छे चरित्र वाला/वाली
चिरनिन्द्रा	-	मृत्यु
चीत्कार	-	चीख, दर्द भरी आवाज़
छात्रवृत्ति	-	वज़ीफ़ा, छात्रों को मिलने वाली मासिक आर्थिक सहायता
जीविका	-	नौकरी, कामधंधा
ज्योति	-	प्रकाश, रोशनी
ड्योढ़ी	-	पुराने घरों के द्वार पर बैठने लायक बना स्थान
तकरीबन	-	लगभग
तहकीकात	-	जाँच- पड़ताल, पूछताछ
तहलका	-	हलचल, भगदड़
तिरस्कार	-	अपमान, अनादर
तोहफ़ा	-	भेंट, उपहार
त्याग	-	किसी वस्तु के अपनेपन का भाव मिटाकर उसे छोड़ देने की क्रिया
दबे पाँव आना	-	चुपचाप आहिस्ता- आहिस्ता आना
दरख़्वास्त	-	प्रार्थना पत्र
दिव्य	-	अलौकिक
दुष्कर्म	-	बुरा काम
धनुर्विद्या	-	धनुषबाण चलाना सीखने-सिखाने का शास्त्र

धन्य होना		सफलता का सम्मान पाना
धर्मद्रोही	-	धर्म का विरोध करने वाला
धूर्त	-	छली, पाखण्डी
धूमिल	-	धुँधला
नदारद	-	गायब
नामुमकिन	-	असंभव
नौ दो ग्यारह होना	-	चुपचाप खिसक जाना, चुपचाप चले जाना
न्यायप्रिय	-	इन्साफ़ पसन्द
न्यौछावर करना	-	वारना, बलिदान करना
पत्थर दिल	-	कठोर हृदय वाला
पुरोहित	-	धार्मिक कार्य करने वाला पंडित
प्रजातंत्र	-	जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा चलाये जाने वाली शासन व्यवस्था
प्रतिज्ञा	-	प्रण, व्रत, दृढ़ निश्चय
प्रतिभा	-	तीव्र बुद्धि
प्राण हथेली पर रखना	-	जान देने को तैयार रहना
बंदोबस्त	-	प्रबंध, इंतज़ाम
बरकत	-	सौभाग्य, लाभ, बचत
बलिवेदी	-	कुर्बानी देने का स्थान
बहुकंठ	-	बहुत से लोगों की एक साथ निकलने वाली आवाज़ें
बेगुनाह	-	निर्दोष, जिसका कोई दोष न हो
बेसाख्ता	-	बिना झिझके, सहज रूप से
भावना	-	मन में पैदा होने वाले भाव
भौजाई	-	भाभी, बड़े भाई की पत्नी
मंदबुद्धि	-	औसत से कम बुद्धि वाला
मगन होना	-	खुश होना

मजाल	-	शक्ति, सामर्थ्य
मनोचिकित्सक	-	मानसिक बीमारियों का इलाज करने वाला
मलामत करना	-	शर्मिन्दा करना
महाबली	-	राजा की उपाधि, बहुत शक्तिशाली
महामारी	-	भयंकर बीमारी (हैजा, प्लेग)
मान- प्रतिष्ठा	-	इज़्ज़त, सम्मान
मुँह लटकाना	-	उदासी प्रकट करना
मिज़ाज	-	हालचाल
मुक्त	-	स्वतंत्र
मुजरिम	-	अपराधी
मुताबिक	-	अनुसार
मृत्युदंड	-	मौत की सज़ा
यम	-	मृत्यु का देवता
रंगमंच	-	थियेटर, नाटक खेलने का मंच
रंचमात्र	-	जरा-सा, थोड़ा-सा
रकाबी	-	कटोरीनुमा एक बर्तन
राजतंत्र	-	राजा द्वारा चलायी जाने वाली शासन व्यवस्था
राजपाट	-	राज-शासन, हुकूमत
रीति- नीति	-	तरीकेदार, रंग- ढंग
रुँधेकंठ से	-	रुँआसा होकर भरे हुए गले से
रुँआसी आवाज़	-	रोने जैसी आवाज़
रुष्ट	-	नाराज़
रेलमपेल मचना	-	भगदड़ मचना
लक्ष्य	-	उद्देश्य, मकसद
लफ्ज़	-	शब्द
लोहार	-	लोहे की वस्तुएँ बनाने वाला व्यक्ति

वाचालता	-	बातूनीपन, आवश्यकता से अधिक बोलने की आदत
वातावरण	-	परिवेश, माहौल
वादी	-	पक्षधर, हिमायती
विजय-पताका	-	जीत का झंडा
विलंब	-	देरी
विषाद	-	दुख
रूढ़ि	-	पुराने रीति रिवाज़
विचारक	-	विचार करने वाला, चिंतक
शराबोर	-	भीगा हुआ, बिल्कुल गीला
शिखर	-	चोटी
शौकीन	-	विलासी रुचि रखने वाला
संकल्प	-	इरादा
संक्षिप्त	-	छोटा-सा
संपन्न	-	धनी, खुशहाल
संभावना	-	अनुमान, मुमकिन होना
संशयपूर्वक	-	संदेह सहित, शक के साथ
सतर्कता	-	सावधानी
सत्यानाश	-	मटियामेट, पूरी तरह विनाश
सर्च लाइट	-	एक ऐसी बैटरी जिसके प्रकाश से दुश्मन की टोह ली जाती है
समर्थक	-	हिमायती, पक्षधर
सांत्वना	-	तसल्ली
साक्षात्	-	सामने, प्रत्यक्ष
सामग्री	-	सामान
सेनानायक	-	सेना का सबसे बड़ा अधिकारी
स्वादिष्ट	-	मज़ेदार, जिसका स्वाद अच्छा हो

संदर्भ

अर्जुन	-	राजा पाण्डु का एक पुत्र
कबाइली	-	पाकिस्तान में सीमान्त प्रान्त के आदिवासी
काशी विश्वनाथ मंदिर	-	बनारस में स्थित शिवजी का एक प्रसिद्ध और प्राचीन मंदिर
कौरव	-	महाभारत काल के राजा कुरु के पुत्र कौरव
क्रामवेल	-	इंग्लैंड का एक सम्राट, जिसके शासन काल में इंग्लैंड में प्रजातंत्र शासन की व्यवस्था का आरम्भ हुआ
गंगोत्री	-	वह स्थान जहाँ से गंगा नदी निकलती है, इसे गोमुख भी कहते हैं